Tiriya Charittar Hindi Story by Shivmurti

1.
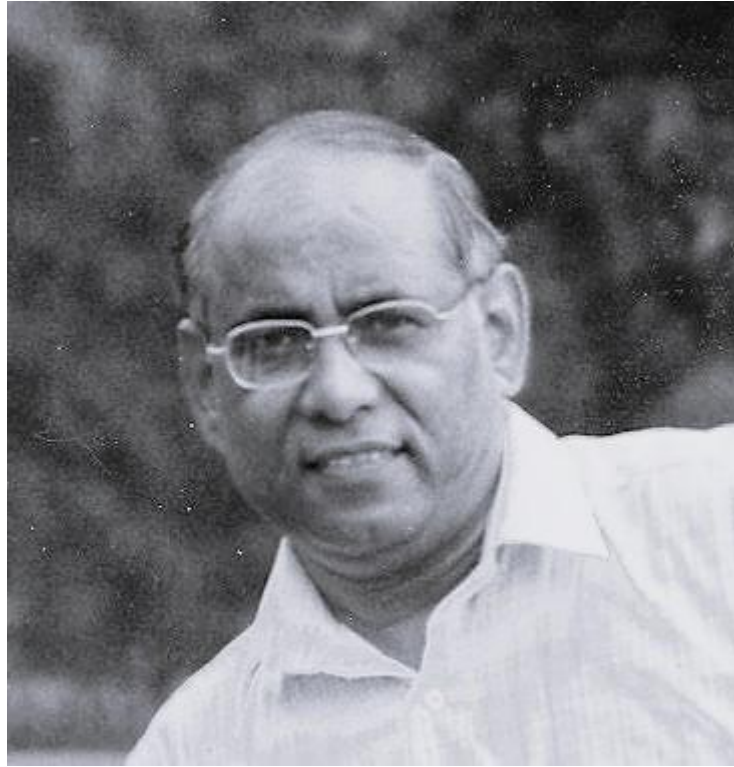
"विमली! ए विमली!... एकदम्मै मर गई का रे..."

जोर लगाते ही बुढ़िया को खाँसी आ जाती है।

"यह हरजाई तो खटिया पर गिरते ही मर जाती है।" - बुढ़िया खटिया के पास जाकर विमली को झिंझोड़ने लगी, "मरघट ले चलौं का रे?"

हड़बड़ाकर उठती है विमली और आँख मींजते हुए झोंपड़ी के बाहर चली जाती है।

लौटती है तो चूल्हे पर 'चाह' का पानी चढ़ाकर बकरी दुहने लगती है।

सात साल पहले, जब पहली बार उसने भट्ठे पर मजूरी करना शुरू किया था, नौ-दस साल की उमर में, तो कमाई के शुरूआत के पैसों से इस बकरी की माँ को खरीदकर लाई थी वह। बाप के लिए 'चाह' का इंतजाम! और अब तो उसके बाप को चाह की ऐसी आदत पड़ गई है कि बिना 'चाह' के उसका लोटा ही नहीं उठता। इसी चाह के चलते बाप-बेटी को बुढ़िया की 'बोली' सुननी पड़ती है।

माँ-बाप को चाह का गिलास पकड़ाकर जल्दी-जल्दी नहाती है वह। रोटी सेंकती है। माँ-बाप के लिए ढँककर और अपनी रोटी बाँधकर निमरी बकरी का कान पकड़कर बाहर निकल जाती है।

आज भी निकलते-निकलते देर हो गई। रोज रात में सोते समय सोचती है कि सबेरे चार बजे ही उठेगी। लेकिन दिनभर ईंट ढोने से थका शरीर! आँखों की पलकें जैसे चिपक जाती हैं आपस में। रोज पाँच-छः बज जाते हैं। माँ को रोटी-पानी के काम में वह लगाना नहीं चाहती...

दरअसल माँ-बाप के लिए लड़का बनकर रहती है विमली! क्या-क्या नहीं सहा-सुना उसके माँ-बाप ने उसके लिए! वह नहीं चाहती कि उसके माँ-बाप लड़के के अभाव को लेकर दुखी हों। किस लड़के से कम है वह? 15-16 रुपये रोज कमाती है, बाप को जाँगर पेरने वाला काम क्यों करने दे? बाप का मन होता है तो गाँव के किसी किसान के गाय-भैंस का पगहा 'बर' देता है। टोना झाड़-फूँक देता है। किसी की बहन-बेटी, नाते-रिश्तेदारों के घर हालचाल लेने चला जाता है, बस! हल्का-फुल्का काम

गाँव के पश्चिम आधा किलोमीटर पर बहती है बिसुई नदी! अर्ध-चंद्राकार! और नदी के उस पार खान साहब का भट्ठा! काला धुआँ फेंकती दोनों चिमनियाँ दूर से ही दिखती हैं।

नदी के दोनों किनारों पर कठजामुनों का जंगल दूर तक चला गया है। धारा की ओर झुकी झाड़ियाँ! और उस पार दूर-दूर तक फैला है बाँस और सरपत का जंगल ! पहले लोग दिन में भी इस खादर में घुसने से डरते थे। खास कर औरतें!... साही, सियार, नीलगाय, लकड़बग्घे, भेड़िए!... और यदा-कदा गाँव के कच्चे मांस पर नजर गड़ाए गाँव के भेड़िये!

पर जब से भट्ठा खुला, यह खादर गुलजार हो गया है। आधे से अधिक गाँव वालों की जीविका अब इसी भट्ठे के सहारे चल रही है।

विमली 'निमरी' बकरी को कठजामुनों के जंगल में हाँकती है और तेज कदम बढ़ाती भट्ठे की ओर चल पड़ती है।

कुइसा बोझवा का मन काम में लग नहीं रहा है। एक 'झुकान' में दस हजार ईंटों की बोझाई करके मूंडी उठाने वाला बोझवा है कुइसा! लेकिन आज!

वह रह-रहकर 'कनमनाता' है और गाँव की ओर से आने वाली पगडंडी पर नजर दौड़ाकर जँभाई लेता है।

गनेशी टोकता है, "का बात है कुइसा भाई? मन नाहीं लागत का?"

कुछ जवाब नहीं देता कुइसा। बंडी की जेब से चुनौटी निकालकर तम्बाकू मलने लगता है।

ट्रैक्टर पर ईंट लदवाता बिल्लर कूट करता है, "कुछ लाल-पियर नाहीं देखात का हो काका?"

लाल! पियर! यानी लाल-पीला!

सुनकर सचमुच लाल-पीला होने लगता है कुइसा! तम्बाकू फटककर बिना किसी को दिए चुपचाप मुँह में दबा लेता है। ऐं!

बिल्लर की बात हमेशा चिढ़ाने वाली होती है।

लेकिन नहीं! सचमुच लाल साड़ी नजर आ जाती है कुइसा को।

विमली भट्ठे के पास पहुँच गई है।

कुइसा की आँखों में चमक आ जाती है।

मुँह में रस या राल? तम्बाकू की या...?

पास आते ही कुइसा आँख तरेरता है, "अब तेरा आने का टैम हुआ है? दस बजने वाले हैं। चलते समय घड़ी देखा था?"

विमली कुइसा की आदत जानती है। बिना मसखरी किए उसका खाना हजम नहीं हो सकता। वह भी आँख तरेरती है, "जेतना काम करेंगे ओतने न मजूरी मिलैगी। तब काहें तोहार छाती फाटत है? और घड़ी देखै अपनी बहिनी क सिखाओ।"

सभी हँसने लगते हैं। कुइसा मुस्कराता है।

कुइसा कहता है कि विमली के आने से भट्ठे पर 'उजियार' हो जाता है। उसके जाते ही अँधियार!

...और अँधियार होते ही 'रतौंधी' शुरू हो जाती है कुइसा को। विमली अगर रात में भट्ठे पर रहे तो कुइसा रात में भी बोझाई कर सकता है।

पहला खेप लेकर आती है विमली। एक पल खड़ी रहती है। कुइसा जान-बूझकर उसके सिर से ईंट नहीं उतारता।

"लेव पकरौ? गरूआत अहीं!"

कुइसा की नजरें उठती हैं। वह मुस्कराता है।

अब यह कुछ 'मुराही' करेगा। विमली ताड़ती है और कुइसा के पैरों के पास ईंटें गिराकर मुस्कराती मिठऊ गाली देती भागती है।

बस इतने का ही तो भूखा है कुइसा।

अपनी-अपनी पसंद! कुइसा को औरतों की गालियाँ, और मिल जाय तो धक्का खाना पसंद है। अगर चार औरतें मिलकर उसे नदी में डुबोने लगें तो भी वह इंकार नहीं कर सकता।

कुइसा की इस आदत से परिचित हैं भट्ठे की मजदूरनें। सब मिलकर ऐसा कुछ करती कहती रहती हैं कि कुइसा का मन लगा रहे।

पचास के पेटे में पहुँच रहा है कुइसा। दर्जनों भट्ठों पर बोझवा मिस्तरी रह चुका है। भट्ठे का काम हाथ में लेने के पहले देख लेता है - कौड़िहा मजदूर सिर्फ राँची के ही हैं या लोकल भी। सिर्फ राँची-विलासपुर के लेबरों वाले भट्ठे पर एक दिन नहीं रह सकता कुइसा। दस-पाँच लोकल मजदूरनें जरूरी हैं - देखने लायक!

सिर से ईंट उतारते हुए गरम साँस और तन का परस!

कुइसा के इस 'लोभ' से वाकिफ हैं खान साहब। तभी तो इस भट्ठे पर वह तीसरा सीजन बिता रहा है।

दरअसल भट्ठे को ही कुइसा घर-द्वारा मानता है। जोरू न जाँता! गौना आया तो कुइसा पर भट्ठा मिस्तरी बनने का भूत सवार था। पूरा का पूरा सीजन भट्ठे पर बिताता। आखिर दो साल इंतजार करने के बाद उसकी औरत चली गई किसी और का घर बसाने। तब से हर साल 'लगन' के महीनों में कुइसा बरदेखुओं का इंतजार करता है। भट्ठे का नशा तो प्राण के साथ ही जाएगा।

कुछ देर बाद विमली के सिर से ईंट उतारते हुए फिर मुस्कराता है कुइसा, "बहुत दिन हुए डरेवर बाबू नहीं आए!"

"बड़ी याद आवत है डरेवर बाबू की?" एक लड़की बोलती है।

सभी जानते हैं कि कुइसा विमली को चिढ़ा रहा है।

"इनके बहनोई हैं डरेवर बाबू! याद काहे न आए।" विमली जाते-जाते बोलती है।

कुइसा की सुस्ती फिर दूर हो जाती है।

लेकिन दोपहर में औरतों के झुंड के साथ नदी किनारे पीपल के पेड़ के नीचे सुस्ताते-खाते हुए विमली को सचमुच डरेवर बाबू की याद आती है। लगता है एक युग बीत गया डरेवर बाबू को देखे हुए।

कुइसा मिस्तरी झोंपड़ी में लेटा बारहमासा गा रहा है दुपहरिया काटने के लिए। औरतों-लड़कियों का झुंड नाना प्रकार की कथाओं-उपकथाओं अफवाहों और गोपनीय कृत्यों-कुकृत्यों का पिटारा खोलकर बैठा है। उन सबकी सम्मिलित हँसी-खिलखिलाहट कुइसा के कानों में पहुँचती है तो वह बारहमासा का पद भूल जाता है।

जाड़े की दोपहर कितनी जल्दी-जल्दी उतरती है। विमली को आज अपनी माँ को लेकर बाजार जाना है - डाक्टर के पास। 'अधकपारी' की दवा कराने। इसलिए दोपहर ढलते ही उसने काम बंद कर दिया है। निमरी बकरी का कान पकड़कर वापस लौटती विमली नदी के पेटे में उतरती है तो सामने बिल्लर ट्रैक्टर धोता हुआ दिखाई पकड़ता है।

विमली को आता देखकर खीस निकालने लगता है।

हमेशा हँसता-हँसाता रहने वाला लड़का है बिल्लर। अट्ठारह-उन्नीस की उमर। महतारी न बाप। इस गाँव में अपनी बहन के घर रहता है और खान साहब के ट्रैक्टर की कालिंजरी करते-करते ड्राइवर बन गया है। दु:ख-तकलीफ की झाँई पास नहीं फटकने देता। फक्कड़ और मसखरा।

ऐसे आदमी की हँसी का साथ देने में कोई बुराई नहीं समझती विमली। वह भी मुस्कराती है।

"आज हाफ-डे काहे कर दिया डरेबराइन?"

बिल्लर के बात करने के ढंग से थोड़ा चिढ़ती है विमली। अकेले में थोड़ा डरती भी है। पाजी है। इसकी आँखों में शैतानी चमकती है।

"तोहार जीभ बहुत चलै लाग बिलरू! हम डरेबराइन हैं?'

फिर हँसता है बिल्लर! और जब विमली ट्रैक्टर की सीध में पहुँचती है तो एक बाल्टी पानी ट्रैक्टर के मडगार्ड पर इस अंदाज से फेंकता है कि आधा पानी उछलकर विमली के ऊपर पड़ता है जाकर।

"तनी देखि के बिलराहू! अँखिया फूटि गई है का?" विमली मुड़कर आँख तरेरती है तो वह खी-खी करके हँसने लगता है।

पानी का छींटा पड़ने से भड़की बकरी उथले पानी में कूदती उस पार चली गई है। विमली थोड़ा-सा धोती ऊपर उठाए धार पार करने लगती है।

"परदेसी का 'टरक' बहुत मन भाया है। जाति बिरादरी का एकदम खियाल नहीं। ट्रैक्टर की ताकत टरक से 'बेसी' होती है विम्मल; कहो तो कौनों दिन लड़ा के दिखा देई।"

उस पार पहुँचकर पीछे मुड़कर मुस्कराती है विमली तो बिल्लर बोनट से उछलकर नदी के दह में कूद पड़ता है।

ऊपर टीले पर चढ़ते-चढ़ते विमली को बिल्लर का गीत सुनाई पड़ता है।

...अरे, टुटही मँड़इया के हम हैं राजा,

करीला गुजार थोरे मा,

तोर मन लागै न लागै पतरकी,

मोर मन लागल बा तोरे मा,

यानी राजा तो हम भी हैं भाई! लेकिन टूटी-फूटी झोपड़ी के राजा! थोड़े में गुजारा करनेवाले। डरेवर बाबू की तरह भारी मुँह-देखाई तो नहीं दे सकते... लेकिन ऐ पतरकी! पतली कमर वाली तिरिया! तेरा मन मेरे पर आए न आए, मेरा मन तो तेरे पर ही लगा हुआ है।

आय-हाय! क्या गोली दागी है बिलराहे ने! वह फिर मुड़कर देखती है। बिल्लर हँस रहा है और ट्रैक्टर के बोनट पर पैर से ताल दे-देकर नाच रहा है।

ह.......रा.......मी !

बिजली का तेल!

माई की 'अधकपारी' के लिए बिजली का तेल मँगाया है विमली ने। कलुआ का मामा बिजली विभाग में काम करता है, उसी से।

मामा कहता है, "ट्रांसफार्मर का तेल! तेल से होकर बिजली गुजरती है तो तेल में बिजली जैसा गुन भर देती है।"

सचमुच बिजली जैसा असर करता है - बिमली की माई कहती है - बाजार के डॉक्टर तो पानी का पैसा लेते हैं। जेब काटने को तैयार! विमली की माई को डॉक्टरी दवाई नही 'सहती'।

महतारी-बाप का जितना ध्यान विमली रखती है, उतना तो इस गाँव में किसी का लड़का भी नहीं रखता। लड़के का ध्यान आते ही उसकी माँ पतोहू को और गाँव की कुटनी-घरफोड़नी औरतों को सरापने लगती है। उसका बेटा विमली से दस साल बड़ा था। लेकिन पतोहू ने आते ही उसे अपने बस में कर लिया। गाँव की औरतों ने आग में पलीता लगाया था और आने के छ: माह के अंदर पतोहू लड़के को लेकर अलग हो गई थी। उसी साल दीवार के नीचे दबने से विमली के बाप के दोनों हाथ बेकार हो गए थे। घर में खाने के लिए अन्न का एक दाना नहीं था। बाप की दवाई के लिए पैसा कहाँ से अता? पतोहू के जेवर सास के पास ही रखे थे। जमीन में दबाए हुए। उसी में से एक थान गिरवी रखना चाहती थी बुढ़िया। सुनते ही अगियाबैताल हो गई थी पतोहू। बिना पानी पिए तीन दिन तक इसी बात पर लड़ती रही थी। सात पुस्त को गरियाती रही थी। लड़के ने सिर उठाकर एक बार भी उसे मना नहीं किया। तीसरी रात झोंपड़ी खोदकर गहने ढूँढ़ निकाले थे पतोहू ने और उसके बेटे को लेकर अपने मायके चली गई थी, जैसे बकरे को गले में पगहा लगाकर ले जाए कोई।

तीन दिन तक घर में चूल्हा नहीं जला था। बूढ़े के हाथों पर 'पलस्तर' चढ़वाना तो बहुत ही जरूरी था लेकिन पूरे गाँव में खोजने पर भी कोई दस रुपया या एक मन अनाज देने को तैयार नहीं था। सरपंचजी की घरवाली पर ज्यादा जोर समझती थी विमली की माई। विमली दो साल से उन्हीं के घर पर रहकर चौका-बासन, गोबर-झाड़ू कर रही थी। मजदूरी के नाम पर दोनों टेम की रोटी और सरपंचजी की बिटिया का उतारन फराक, चड्ढी।

लाख पैर पकड़े विमली की माई ने कि बिना पेट में कुछ गए सबेरे दोनों बूढ़ा-बूढ़ी उठने लायक नहीं रहेंगे लेकिन सरपंच की औरत ने साफ कह दिया - बिना कोई चीज गिरवी रखे कानी कौड़ी नहीं दे सकती वह! ...और गिरवी रखने की चीजें लेकर पतोहू मायके जा चुकी थी... विमली टुकुर-टुकुर माँ का रोना देख रही थी।

रोते-रोते खाली हाथ वापस लौट आई थी विमली की माई- एक घंटा रात बीते। दोनों बूढ़े-बूढ़ी तीसरी रात को भी खाली पेट लेटे।

लेकिन पहर रात बीते आई थी विमली। नौ साल की बच्ची ! फराक में दोपहर की बनी दो मोटी रोटियाँ छिपाए हुए। एक विमली का हिस्सा और एक सरपंचजी की दोनों भैंसों का। भैसों के हौदे में न डालकर वह रोटियाँ लेकर माँ के पास दौड़ी आई थी और किसी को संदेह न हो इसलिए उसे दौड़ते हुए ही वापस भाग जाना था।

रात भर लगा था निर्णय लेने में विमली को। और सवेरे वह अपनी झोंपड़ी में लौट आई थी, "नहीं करना उसे ऐसी जगह गोबर-झाड़ू, जहाँ माँगने पर भीख भी नहीं मिल सकती।"

"नहीं करना? फिर क्या करेगी? गरीबी में आटा गीला करेगी? कम-से-कम अपना पेट तो पाल रही है। यहाँ तो तीन दिन से चूल्हा रो रहा है।"

"अपना ही क्यों? सबका पेट पालेगी वह!" भाई भाग गया तो क्या? वह लड़का बनकर रहेगी। नया-नया भट्ठा खुला है गाँव में। काम की अब क्या कमी है?...कौन कहता है कि आदमी-लड़के ही काम कर सकते हैं भट्ठे पर? राँची की मजदूरनें औरतें नहीं है? वे किसी से कम काम करती हैं? तब वह क्यों नही कर सकती? कितनी बार तो बुलाने आ चुका है भट्ठे का मुंशी गाँव की औरतों-लड़कियों को। वह कल से ही भट्ठे पर नाम लिखा लेगी... जितनी ईंट ढोओ उतना पैसा। ठेके पर।"

कुछ अटपटा-सा लगा बिमली की माई को। दुनिया की बात वह नहीं जानती लेकिन यहाँ पर तो अभी तक आदमी लोग ही जाते हैं भट्ठे पर। औरतों का जाना...

लेकिन विमली की माई चुप भी हो जाए तो क्या सारा गाँव चुप रह जाएगा। सबसे पहले सरपंच की घरवाली ने ही मुँह बिचकाना शुरू किया, "हुँह! सठिया गई है क्या बुढ़िया? अच्छे भले खाते-पीते घर में पड़ गई थी लड़की। जूठा-कूठा खाकर, घूरे पर सोकर भी चार साल में बाछी से गाय हो जाती। अब भट्ठे पर 'टरेनिंग' देगी बिटिया को। सयानी हो रही है ना। इस घर का गल्ला खा-खाकर उमर से पहले ही मस्ती चढ़ रही है। ले 'टरेनिंग'। बहुत लोग 'टरेनिंग' देने के लिए 'लोक' लेने को बैठे हैं वहाँ।"

विमली के बाप को चढ़ाया सबने, "दुनिया भर के चोर-चाई का अड्डा है भट्ठा। लौंडे-लपाडे! गुंडा-बदमाश! रात-बिरात आते-जाते रहते हैं। नौ-दस साल की लड़की छोटी नहीं होती, आन्हर हो गई है बुढ़िया। ईंट पथवाएगी। 'पाथेगा' कोई ढंग से तब समझ में आएगा।"

विमली के बाप का तो दिमाग ही गरम हो गया था 'बोली' सुन-सुनकर। नाक कटवाने पर तुल गई है दोनों माँ-बेटी... नहीं करवाना उसे हाथ पर पलस्तर। लूला ही रहेगा। भूखों ही मरेगा लेकिन..., हाथ ठीक होता तो गला दबा देता माँ-बेटी दोनों का।

लेकिन विमली की माई ने शाम को हुक्का गुड़गुड़ाते हुए थिर मन से समझाया था, "जलती हैं तो जलें सब। सारा गाँव जले। वह सबके जले पर नमक छिड़कवाने का इंतजाम कर देगी। इस बार हफ्ता बँटने पर वह एक बोरा नमक लाएगी खरीदकर। जिसको अपने जले पर नमक छिड़कवाना हो, आकर छिड़कवा जाए... मेरी बिटिया जनम भर दूसरे की कुटौनी-पिसौनी, गोबर-सानी करे, फटा-उतारा पहिरे, तब इनकी छाती ठंडी रहेगी... एक टूका रोटी के लिए दूसरे का लरिका सौंचाए... भट्ठे पर कौन बिगवा (भेड़िया) बैठा है। सबेरे से साँझ तक काम करो। फिर अपने घर। एहमा कौन बेइज्जती? इस गाँव के लोग किसी के चूल्हे की आग बरदास नहीं कर सकते। जैसे इनकी छाती पर जलती है। इन्हीं लोगन के चलते हमार सोना जैसन बेटवा हाथ से निकरि गवा। तू लूल तो भवै हो, अन्हरौ होई गए हौ का? कुछ सोचौ-समझौ!"

विमली का बाप तो-एक-दो दिन में चुप हो गया लेकिन पंद्रह-बीस दिन बाद विमली का ससुर दौड़ा आया। साल भर पहले ही तो विमली का 'विवाह' हुआ था। उसके ससुर को पतोहू के भट्ठे पर काम करने पर सख्त एतराज था। अभी तो खैर लड़की छोटी है लेकिन चार साल में सयानी हो जाएगी तब...विमली की माँ ने किसी तरह समधी को भी समझा-बुझाकर वापस किया था।

और अब आकर देखे कोई। आधे गाँव की बिटिया-पतोहू भट्ठे पर मजूरी कर रही हैं। शुरूआत किया था विमली ने।

बाप के गुस्से से बचपन से परिचित है विमली। उसका गुस्सा ठंडा होता है 'मछरी' या कलिया से। विमली जानती है, और तीसरे-चौथे उसका इंतजाम कर देती है।

झोंपड़ी में था क्या पहले। टूटी चापपाई तक नहीं थी। बासन के नाम पर फूटा तवा! टूटी कड़ाही! एक कठौता! दो कठौती! दस जगह से पिचकी अलमुनिया की भदेली। विमली ने धीरे-धीरे पूरी गृहस्थी जोड़ी है। उसके बाप-भाई पाँच साल में भी झोंपड़ी पर नई छाजन नहीं डाल पाए थे। वह हर तीसरे साल छाजन बदलवाती है। विमली की ही कमाई से उसका बाप फिर से हाथ वाला हुआ है।

बाप की रजाई अलग। माई की अलग। कहीं आने-जाने के लिए कमरी! बजार में हुई नीलामी से बाप के लिए मलेटरी वाली जर्सी लाई खरीदकर। माई की तम्बाकू और खैनी कभी घटने नहीं पाती। बाप की धोती! कुरता! अँगोछा!

छः सात साल क्या होते हैं? लेकिन इतने ही समय में एक-एक करके तीन-चार थान गहने बनवा लिये हैं विमली ने। उसका बाप चुपचाप अंटी में रुपया लेकर शहर जाता है और कभी पायल, कभी ऐरन, कभी कमर-करधनी! सचमुच लक्ष्मी है उसकी बेटी।

आज फिर विमली को नहाने में देर हो रही है। राबिस से फटे पैर। आधा घंटा तो एड़ियाँ रगड़ने में लग जाता है। लाख तेल मले। दवा लगाए।

आज फिर डरेवर बाबू आने वाले हैं।

आज फिर लाल साड़ी पहनकर जाएगी विमली।

डरेवर बाबू को लाल साड़ी बहुत पसंद है।

लाल साड़ी पहनते हुए विमली मुस्कराती है। उसके हाथ का बना मुर्गा तो अब सारी दुनिया खाना चाहती है। लेकिन वह इतनी फालतू तो नहीं।

शुरू-शुरू में डरेवरजी के लिए भट्ठे पर खाना बनाने का जिम्मा उस पर पड़ा तो बड़ी खुश हुई थी वह। लेकिन उसका 'कारन' दूसरा था। तब वह बहुत छोटी थी। खाना बनाने, खिलाने, बर्तन माँजने, चौका लगाने आदि में वह आराम से चार घंटे गुजार देती थी। खान साहब खाना बनाने की मजूरी पाँच रुपये अलग से देते थे। पाँच रुपये तब दिन भर की दिहाड़ी के बराबर होते थे। लेकिन खुशी का असली कारण था चार घंटे के लिए ईंट ढोने से फुरसत! एक खेप में बारह ईंट की लदनी। दोपहर भर में ही गरदन अकड़ जाती थी।

खान साहब होशियार आदमी हैं। उनके भट्ठे से कोई नाराज होकर नहीं जा सकता। कहाँ 'खान' का भट्ठा और कहाँ डरेवर बाबू का उतना मोटा जनेऊ! उससे तो उसकी निमरी बकरी बाँधी जा सकती है। तो हर ऐरी-गैरी जगह तो वे खा नहीं सकते। बड़ी सफाई चाहते हैं।

और जितनी देर में मीट मुर्गा तैयार होता है, खान-साहब कोयले का दाम जुटाने के जुगाड़ में लग जाते हैं। बिना कोल-ऐजेंट का पिछला बकाया दिए, बिना ब्याज के, आधा-पूरा दाम देकर कोयला लेना कम जीवट का काम तो है नहीं!

वह भट्ठे पर पहुँची तो अभी डरेवरजी का टरक नहीं आया था। कुइसा मिस्तरी दूर से ही देखता है और काम छोड़कर खड़ा हो जाता है। कमर सीधी कर ले थोड़ा। विमली के पहुँचतें ही टोकता है, "आज तू फिर माँग टीका लगाकर आई! लाख बार कहा कि इसका 'चोन्हा' हमें 'बरदास' नहीं होता।"

"बरदास नहीं होता तो आँख फोड़ लो," वह आँख उलटकर मुस्कराती है।

बिल्लर कहता है, विमली खान साहब के भट्ठे की 'हेड-लाइट' है।

हाथ-पैर धोकर वह भंडारे में घुसती है।

लहसुन, धनिया, अदरक, प्याज, मिर्च, हल्दी! भले खुद कलिया मुर्गा नहीं खाती लेकिन कौन-सा मसाला कितना डालना है, कैसे पकाना है इसे कोई विमली से सीखे।

मसाला तैयार करते-करते मुंशी जी मुर्गा कटवाकर दे जाते हैं।

डरेवर बाबू की याद से ही सारे शरीर में गुदगुदी लगती है। पहले वह डरेवर बाबू से ज्यादा बात नहीं करती थी। खाना बनाकर बाहर निकल जाती थी और पांडे खलासी परोसकर खिलाता था। एक साल पहले उस बार आए डरेवरजी तो दाहिनी कलाई में कसकर रूमाल बाँधे थे - तेल में भीगा हुआ। पांडे खलासी चलाकर लाया था टरक। हाथ में मोच था या कहीं दब गया था। अंदर अंदर खून जम गया था।

"थोड़ी-सी पिसी हल्दी तेल में गरम कर देना विमला। मालिस करना पड़ेगा," डरेवर बाबू ने कराहते हुए कहा था।

हल्दी-तेल की कटोरी पकड़ते हुए पता नहीं क्या था डरेवर बाबू की आँखों में कि वह बोल पड़ी थी, "लाइए, मैं कर दूँ मालिस।"

डरेवर बाबू बच्चों की तरह चुपचाप मालिस कराने लगे थे।

"पंजे को जरा जोर से दबाइए जमीन पर। हाँ, ऐसे।"

"अरे एतना सी-सी काहे करते हैं? बहुत 'दरद' होता है?"

वह फिक् से हँसी तो डरेवर बाबू का सारा 'दरद' दूर हो गया था।

पुराने रूमाल की पट्टी बाँधते-बाँधते कहीं कुछ अपने मन के कोने में भी बाँध लिया था विमली ने उस दिन।

इंजन की आवाज कानों में पड़ती है तो उसका दिल धक-धक करने लगता है ।

छी-ई-ई-छक्क!

इंजन बंद होने से पहले जोर से छींकता है ट्रक! सब लड़कियाँ कहती हैं - छिंकनहवा टरक! बहुत पहले शुरू-शुरू में बगल से ईंट लेकर गुजरते हुऐ ऐसे ही छींका था तो चौंकने से दो ईंटे उसके पंजे पर गिर पड़ी थी। बड़ी देर तक रोती रही थी वह ।

ऐसे क्यो छींकते हैं सारे टरक? एक दिन वह डरेवरजी से पूछेगी।

दाहिना फाटक खोलकर उतरते हैं डरेवरजी!

फूल छाप लुँगी? लम्बी नोक वाला जूता। बड़ी-बड़ी काली मूँछें! नीली बनियान! काला शरीर! भरा हुआ! गले में पतली-सी सोने की सिकड़ी।

भंडारे में झाँककर हँसते हैं, "राम-राम भाई।"

"राम-राम!" वह धीरे से जवाब देती है। हँसती है। कितनी हँसी छूटती है! बेबात की हँसी। आगे के दोनों दाँतों में सोना मँढ़वाया है डरेवरजी ने। हँसते हुए कितना अच्छा लगता है।

डरेवरजी कुछ कागज-पत्तर लेकर खान साहब के पास चले जाते हैं।

टरक को दुल्हन की तरह सजाकर रखते हैं डरेवरजी। एक बार बहुत पहले उसने झाँककर देखा था अंदर। गोरी-गोरी खूबसूरत मेमों की छापी चारों तरफ! बीच में बैठते हैं डरेवरजी।

पांडे खलासी अंदर झाँककर सूँघता है, "मुर्गा तैयार!" फिर हँसता है।

"कहौ पांडे भाय?"

भाय कहने से बहुत खुश होता है पांडे। भाय माने भाई नहीं। दोस्त? यार? गुइयाँ? नहीं। इसके अलावा कुछ। इससे थोड़ा बारीक।

पांडे भाय मुँह फैलाकर हँसता है। सुर्ती से काले दाँत! डरेवर बाबू के आगे के जिन दोनों दाँतों में सोना मँढ़ा है, पांडे के वही दोनों दाँत टूटे हुए हैं- झरोखा।

पहले वह कहती थी पांडे चाचा! 'चाचा' सुनकर पांडे का मुँह लटक जाता था।

उल्टी रीति है इस टरक की भी। बाकी टरकों के खलासी लौंडे होते हैं, डरेवर बूढ़े! और इस टरक के...

नहाकर रसोई में घुसते हैं डरेवर बाबू-उघारे बदन! विमली चूल्हे से सटाकर पीढ़ा और पानी रखती है।

खाना और तापना साथ-साथ।

छाती के बाल कितने लम्बे, घने और काले हैं डरेबर बाबू के। शरीर से पके कैथ की महक आ रही है। वह जोर से साँस खींचकर पके कैथ की महक सूँघती है।

खाने की थाली आगे सरकाती हुई वह पूछती है, "चमरौधा जूता टरक के आगे काहे लटकाए हैं? अंदर रखने की जगह नहीं है?"

हँसते हैं डरेवरजी, "ई जूता नहीं, पनही है। ट्रक में नजर लगाने वालों के लिए। चौराहे के मामा के लिए।"

मामा की बात तो उसे नहीं पता लेकिन नजर-टोना!

"तब तो घरवाली को नजर से बचाने के लिए घर के सामने भी पनही टाँगते होंगे?"

"पहले घरवाली का जुगाड़ लगाओ तब न जूता-पनही टाँगेंगे।"

ऐ! भिटहुर जैसे हो गए और घरवाली का जुगाड़ नहीं। उसे जाने कैसा लगा। तकलीफ हुई? अच्छा लगा? कुछ ठीक पता नहीं। लेकिन डरेवर बाबू को उसने ज्यादा ध्यान से देखा और एक साथ दो-तीन रोटियाँ निकालकर थाली में डाल दी।

कहते हैं, पहले घरवाली का जुगाड़ लगाओ। जैसे मुझे ही लगाना है जुगाड़।

"मुर्गा बहुत मारू बनाती हो विम्मल! खाती नहीं हो तो इतना अच्छा बना कैसे लेती हो?"

विमली कोई जवाब नहीं देती। चबुरी बाँधकर चुपचाप सुरूआ उँडेलने लगती है कटोरी में।

"खाली मसाले का कमाल नहीं हो सकता यह! जरूर तुम अपने पास का कुछ डालती हो इसमें।"

विमली जोर से हँसती है। खुलकर।

"बात बनाना बहुत आता है आपको।' विमली डरेवरजी की आँखों में झाँकती है।

यह आदमी तो आँखों से ही हँसता है, धत्त!

डरेवरजी लुँगी के अंदर से एक पैकेट निकालकर विमली की तरफ बढ़ाते हैं। वह हाथ नहीं बढ़ाती तो उसके बगल में रख देते हैं।

"ई का है?"

"घर ले जाकर देखना।"

"कुछ लाया मत करिए। माई नाराज होती है।"

"माई कैसे देखेगी इसे। अंदर पहनने की चीज," डरेवरजी इशारे से बताते हैं तो विमली का मुँह लाल हो जाता है- भक्क!

"हर बात माई से बताने की आदत रहेगी तब तो आगे चलकर बड़ी परेशानी होगी।" डरेवरजी हँसते हैं।

"अच्छा, अब चुपचाप खाकर भागिए। अभी पांडेजी अगोर रहे हैं।"

"झरिया-धनबाद घूमने कब चल रही हो? इस बार बिना साथ लिये नहीं जाऊँगा।"

विमली भौंहों में हँसती है और पांडे के खाने की थाली लेकर बाहर निकल जाती है।

खाने के बाद विमली के आँचल में ही हाथ-मुँह पोंछने का मन करता है डरेवर बाबू का। लेकिन...

झरिया! धनबाद!

डरेवरजी हर बार उसे झरिया-धनबाद चलने का न्योता देते हैं। गाँव और बाजार छोड़कर कभी बाहर नहीं गई है विमली! बनारस! झरिया! धनबाद! सबके बारे में सिर्फ सुनती है। लेकिन कल्पना की आँखों से जो झरिया दिखाई पड़ता है वह कम सुंदर नहीं! झर ! झर! झरता हुआ झरिया। बनारस! कितना रसदार! गन्ने जैसा और धनबाद में उतना धन न होता तो कैसे अपनी टरक दुल्हन की तरह सजाते डरेवरजी?

विमली को लगता है कि थक जाने पर 'टरक' का हाथ-गोड़ भी मींजते होंगे डरेवरजी और पांडे खलासी मिलकर। धत्त!

जाने से पहले एक लोटा पानी माँगकर पीते हैं डरेवरजी। प्यास उनकी आँखों में बसी है।

धूल उड़ाते जाते ट्रक को बड़ी देर तक खड़ी देखती रहती है विमली। ट्रक के आगे दोनों ओर काली लम्बी चोटी-सी लटकती रहती है। जैसे हाथ हिलाकर बुलाती हो, चलो विमला झरिया-धनबाद!

'चीज' लाकर परेशानी में डाल गए डरेवर बाबू। अगली बार पूछकर दाम दे देगी जरूर।

जूठे बर्तन धोते हुए उसकी आँखों में एक बार फिर डरेवरजी की प्यासी आँखे कौंध जाती हैं। सूखे होंठ चाटते हुए डरेवरजी।

...टोपी वलवा पियासा चला जाय,

हमारे लगे दुइ गगरी...

(प्यासा ही चला जा रहा है टोपी वाला छैला!

जबकि मेरे पास दो-दो घड़े हैं - व्यर्थ!)

मकर संक्रांति।

अघोरी बाबा के मठ का मेला। कई कोस दूर से लोग आज के दिन 'खिचड़ी' चढ़ाने आते हैं मठ पर।

झोंकाई के अलावा आज भट्ठे का सारा काम बंद है। सारे मजदूर, स्त्रियाँ, बच्चे ट्रैक्टर-ट्राली पर लदकर जा रहे हैं मेला देखने।

बिसुई के बिलकुल कंठ पर है बाबा का मठ।

मकर-असनान! खिचड़ी-दान और मेले की मौज।

पीपल के पेड़ के नीचे, काली मंदिर के सामने बकरा कटेगा। काली का परसाद। भट्ठे के मजदूरों ने ही बनाया है यह काली मंदिर। ईंट लादकर जाने वाला हर गाड़ीवान या ट्रैक्टर वाला हर खेप में दो ईंटें गिराता है मंदिर के नाम पर। दो-दो ईंट के दान से बना मंदिर। मेहनत भट्ठा-मजदूरों की और सीमेंट सरिया खान साहब का। बालू का दान दिया है बिसुई नदी ने। काली की मूर्ति देखा? कितना विकराल रूप। खान साहब ने ही मँगाया है। 'खान' साहब के पड़दादा जब 'सिंह साहब से 'खान' साहब हुए तो उनकी कुलदेवी यह काली उनके गर्भ-गृह में भूमिगत हो गई थीं। उन्हीं की पुनर्स्थापना।

बहुत जाग्रत देवी हैं। बड़ा 'जस' है। कुइसा मिस्तरी भी इस साल होली पर बकरा चढ़ाएँगे-कहीं से एक घरवाली का जुगाड़।

खाना तैयार करने और बलि के कर्मकांड के लिए पाँच-छः औरत-मर्द रूके हैं मंदिर पर! बकी सभी मेला!

मजदूरनों की मेट है विमली। वह ट्राली के बीच में गोल बनाकर बैठी है।

गोरे, साँवले, काले, आबनूसी चेहरे। जूडे में फूल और लाल रिबर! बेवजह हँसती हैं सब। सफेद दाँतों की पंक्तियाँ।

ट्रैक्टर पर बैठा कोई बोलता है, "ऐ! गाना शुरू करो।"

कितने गीत, भजन, कीर्तन, सोहर, नटका, दादरा, खेमटा याद है विमली को, कोई हिसाब नहीं।

विमली के गीत का तुरंत असर होता है। राँची वाली दो-तीन लड़कियाँ उठकर नाचने लगती हैं। चलती हुई ट्रैक्टर ट्राली में घेरा बनाकर नाचती लड़कियाँ! क्या बात है!

लेबरों ने ढोल-कनस्तर सँभाल लिया है। गाने की आवाज ढोल-कनस्तर और ट्रैक्टर के शोर में डूब जाती है। सिर्फ कोलाहल! हँसी!

कुइसा भी ट्राली में ही बैठना चाहते थे। लेकिन बिल्लर ने उन्हें ट्रैक्टर के मडगार्ड पर बैठा दिया - उनके पद के अनुसार। वे बार-बार मुड़कर ट्राली की ओर दखते हैं। तभी कोई कूट करता है - "काका! झुलनी लिये हो?"

झुलनी! पता नहीं इस शब्द से कितनी चिढ़ है कुइसा को। और कैसे हैं लोग कि हँसने-बोलने के मौके पर भी डंक मारने से नहीं चूकते।

दरअसल खान साहब के भट्ठे पर आए थे कुइसा तो कुछ आस लेकर आए थे। खान साहब के मुंशी ने झाँसा दिया था कि आपकी जाति-बिरादरी बहुत है हमारी तरफ। लड़कियों की कौन कमी। एक छोड़ दस घरवालियाँ रखो।

इसी विश्वास पर पहले साल कुइसा 'लगन' भर गाँव-गाँव घूमे। दिन भर भट्ठे पर बोझाई और रात किसी गाँव में। बहुत गाँजा बीड़ी तम्बाकू बर्बाद कराया लोगों ने। सबसे बताते-पतोहू के लिए झुलनी तो मेरी माँ ही गढ़ा गई थी मरने के पहले।

जेब में ही रखते थे झुलनी। प्लास्टिक की डिबिया में, लाल मखमल में लपेटकर। निकालकर दिखाते। इसके अलावा पाँच विगहा जमीन है। पाँच सौ की पगार। घरवाली हो जाए तो भैंस लाते कितनी देर लगेगी?

आखिर मिली एक घरवाली। उसका जीजा साली के लिए दूसरा वर खोज रहा था। बहुत छुपाकर सारा मामला तय हुआ क्योंकि 'साली' के 'बियहा' को पता लगने से सारा मामला खराब हो सकता था।

कई थान गहना, साड़ी, चादर, चप्पल। सिंगार-पटार का सामान... सब लेकर गए कुइसा। तय था कि लड़की का जीजा बाजार में लेकर आएगा लड़की को और वहीं से पहना-ओढ़ाकर विदा कर दिया जाएगा।

विदा कराते-कराते शाम हो गई। अघोरी बाबा की मठिया पर नदी पार करते-करते अँधेरा हो गया। कितना धीरे-धीरे चलती है दुल्हन! ज्यों-ज्यों अँधेरा घिरता जा रहा है, पीछे की ओर पिछड़ती जा रही है।

इस पार आकर इंतजार करने लगे कुइसा... कहाँ गई दुल्हन! थोड़ी देर बाद वापस नदी के पेटे में खोजने के लिए लौटे। कहीं कोई नहीं। किनारे, पानी की धार के पास रेत पर एक पोटली-सी पड़ी थी। उठाकर देखा - नाच में जनाना का 'पाठ' करने वाले नचनिया लड़के सीने पर ब्लाउज के नीचे दो छोटी-छोटी गेंद सी बाँध लेते हैं - वही। इस धोखे से सारी जमा-थमा निकल गयी थी कुइसा की।

तब से झुलनी कहने पर आग लग जाती है उनके बदन में।

एक पेड़ के नीचे ट्रैक्टर खड़ा कर देता है बिल्लर!

चारों तरफ भीड़-ही-भीड़। रंग-बिरंगे लोग। रंग-बिरंगे कपड़े। कपड़े जो सालो-साल मेले के इंतजार में गगरी या गठरी में कैद रहते हैं।

दूर-दूर के बिछड़े लोग बिछड़े दिल मिलेंगे मेले में। जो उस तरह खुल्लम-खुल्ला नहीं मिल सकते। कितने मिलने वाले रात आठ बजे की रेलगाड़ी पकड़कर भाग जाएँगे दिल्ली-लुधियाना।

जितने लोग उतने सपने। उतनी चीजें... क्या लें, क्या छोड़ें?

विमली ने ठुड्डी पर 'तिल' गोदाया है और कलाई पर - सीताराम!

सीताराम? भगतिन हो गई?

किसी को क्या पता कि सीताराम उसके आदमी का नाम है। कितने जतन से पता लगाया है। उसने अपने आदमी का नाम?

अनजाने अनदेखे आदमी का नाम? सीताराम!

वापस भट्ठे पर पहुँचते-पहुँचते एक घंटा रात बीत जाती है। फिर काली मंदिर की पूजा! नाच-गाना! आधी रात तक। खान साहब ने बिल्लर को सौंपा-जिन औरतों-लड़कियों के साथ उनके घर का कोई आदमी नहीं है उन्हें घर तक छोड़ना उसके जिम्मे।

आखिर में पड़ती है विमली की झोंपड़ी। थोड़ी हटकर। अकेली रह जाने पर बोलती है, "अब तू जा रे। मैं चली जाऊँगी अकेले।"

"चल-चल। अभी कुछ हो-हवा जाए तो?"

"हो-हवा क्या! कोई बिगवा बैठा है रास्ते में?"

"तेरे लिए बिगवों की कमी है? तू जहाँ रहेगी वहीं बिगवा पैदा हो जाएँगे।"

"बिगवा आएगा तो टाँग पकड़कर चीर न डालूँगी।"

"तेरा बाप बैठा अगोरता होगा। कनकनाता होगा। उसका वश चले तो झोंपड़ी के सामने से सबका आना-जाना बंद कर दे। साइकिल की घंटी बजाने से चिढ़ता है।"

सहसा सरपताही से कोई जानवर निकलकर भागा। आगे-आगे चलती विमली चौंककर ठिठकी तो बिल्लर उसकी पीठ से सट गया आकर।

पूस माघ का जाड़ा। बादल छाए हुए हैं। बदली के चाँद की उजास।

"ए बिलरू। बड़ी बदमाशी सूझती है - हट!"

"अरे-अरे। मनई जैसा चल।"

"बदमाशी' पर उतर आया है बिल्लरवा। पहले से शंका थी विमली को।

"डरेवर बाबू की देह महकती है और मेरी गंधाती है?"

"रमकल्ली के भतार! न तू हमार बियहा हो न डरेवर बाबू। खबरदार।"

अरे एकदम 'सनक' गया है?

विमली के दाँत कलाई में धँस गए हैं बिल्लरवा की। बाप रे! बिल्लर की चीख निकल जाती है।

अकिल गुम हो गई है बिल्लर की - एक पल में हँसती खिलखिलाती अगले ही पल एकदम 'कटही'! सोचती क्या है! चाहती क्या है! और बोलती क्या है!

आँखें कुछ और बोलती हैं! जीभ कुछ और!

'मूढ़' जैसा आगे-आगे चलने लगा है बिल्लर! विमली पीछे-पीछे। मुड़ते ही सावधान हो सकती है!

उदास हो गया बिल्लर! एकदम चुप!

कुछ देर बाद बेवजह हँसती है विमली! खनखनाती हुई हँसी, "नाराज न हो बिल्लर! बदमाशी नहीं करनी चाहिए रे।"

जादूगरनी! बिल्लर सोचता है - कोई जादू सिद्ध है इसको!

विमली का बाप उसके इंतजार में झोंपड़ी के बाहर चिलम पर चिलम फूँकता आग तापता बैठा बुढ़िया को गालियाँ दे रहा है। इतना रात में उसे बिल्लर के साथ आया देख भड़क उठता है - 'अब जाकर तेरा लौटने का 'टेम' हुआ है? खबरदार जो कल से घर से बाहर कदम रखा। हाथ-गोड़ तोड़ दूंगा। इतनी-इतनी रात तक मेला देखेगी तू?"

बिल्लर 'तप्ता' पर हाथ सेंकत हुए बोलता है, "गोदना गोदवाने गई थी बुढ़ऊ! एक पहर रात बीतते ही 'परान' निकल रहे हैं। बिदा कर दोगे तो कैसे चैन पड़ेगा?"

वह बोली बोल सकता है। इस गाँव का साला जो है।

विमली का मन होता है - झाड़ू लेकर मुँह पीट डाले इस बिल्लरवा का। लेकिन बाप के गुस्से को देखकर चुपचाप झोंपड़ी में घुस जाती है।

माँ की रजाई में घुसकर बताती है, "रतौंधी की गोली लाई हूँ माई, तेरे लिए मेले से। अँधेरा होने के एक घंटा पहले एक गोली रोज...."

अभी तक माँ से ही चिपककर सोती है विमली रात में! अकेल उसे नींद नहीं आती।

माँ बड़ी देर तक बेटी को तमाम ऊँच-नीच, इज्जत-आबरू की बात समझाती है। इतनी-इतनी रात तक घूमना! उसके बाप का बिगड़ना अकारण थोड़े है।

"सुनते हैं कोई डरेवरजी आते हैं। कोई सर-सामान रुपया-पैसा नहीं छूना! खबरदार! परदेशी की प्रीत! नहीं लगाना।"

विमली को बच्चा क्यों समझती है उसकी माँ! दुनिया भर की भूखी नजरों की भाखा पढ़-पढ़ कर वह कब की पंडित हो गई है - बुढ़िया को कौन बताए।

जिस बात की लोग चर्चा करें, शंका करें, बस उसी से बचना चाहिए, यह समझ तो अपने आप आ जाती है। कब आ जाती है, खुद विमली को भी नहीं पता। माँ क्यों इतना डरती है?

जो बात जितनी अच्छी लगे उसमें उतना ही खतरा! बस इतनी-सी बात!

बुढ़िया चुप होती है, जब विमली का हुँकारी भरना बंद हो जाता है।

रतौंधी होने से क्या हुआ। बुढ़िया विमली को मन की आँखों से देखती है। मन की आँखे बहुत तेज हैं बुढ़िया की। वह विमली के एक-एक अंग के बाढ़ का हिसाब रखती है। पराया धन। जब तक जिसकी अमानत उसको न सौंप दिया जाए...

सो गई लड़की! खटिया पर गिरते ही मरती है। अब बुढ़िया विमली के एक-एक अंग को टटोल-टटोलकर पढ़ रही है - सीना! पेट! कूल्हे! आखिर दुनिया भर के लौंडे-लपाड़ों के बीच दिन काटती है उसकी बेटी!...

विमली साँस खींचे माँ के हाथ के स्पर्श अनुभव करती है - चुपचाप! गुदगुदी रोके नहीं रुक रही है।

दूसरे दिन ही खबर फैलती है - बिल्लर ने विमली को जलेबी खिलाई है मेले में।

और जलेबी का दाम!

बिल्लरवा रात में अकेले गया था विमली को पहुँचाने।

सुना है बिल्लर ने भी विमली से कलाई पर पट्टी बँधवा ली रात में। जैसे पार साल डरेवर बाबू ने बँधवाई थी।

विमली को आता देख नदी के दह में कँटिया लगाए बैठा दस-बारह साल का कलुआ गाने लगता है... अब ना खाबै ठोंगा की जलेबी मोरी माई रे।

तब भी वह नहीं समझती।

भट्ठे पर सभी कूट हँसी हँसते हैं। दोपहर में कुइसा निरगुन गाता है "नैहर में दाग पड़ा हो मोरी चुनरी... नैहर मा..."

पता नहीं क्या आग लगाई है बिल्लरवा ने? या किसी और ने। जाने कैसे मेले की खबर उसकी ससुराल तक पहुँच गई। उसका ससुर दौड़ा आया है... सुनते हैं उसकी पतोहू ट्रैक्टर पर बैठकर मेला देखने जाती है... जलेबी!... आधी रात तक बाहर! कोई 'धर्मशाला' है उसकी पतोहू? कि पंचायती हंडा? जो चाहे 'खिचड़ी' पका ले। बिना गौने का 'दिन धराए' वापस नहीं जाएगा वह?

'देखिए समधी भाई? बात को समझिए! न-नुकुर करने में इज्जत नहीं है। चावल 'सिरजा' जाता है, 'भात' नहीं। चावल भात बना नहीं कि दूसरे दिन ही सड़ने लगता है। लड़की 'सयानी' हुई तो भात हो गई। उसे तो ससुराल भेजने में ही इज्जत है।"

सीझा-सुलझा आदमी मालूम होता है विमली का ससुर! पाँच-पंच के बीच में बोलना आता है... चावल... भात... कायल होने के अलावा रास्ता क्या है?

लेकिन पहले 'टेवा' में ही हामी नहीं भर सकती किसी लड़की की माँ। लोग कहेंगे लड़की माँ-बाप पर भारी पड़ रही थी। किवाड़ की आड़ से बात कर रही है विमली की माँ, "एक बार तो समधी को लौटना ही पड़ेगा।"

समधिन की बात है तब तो मानना ही पड़ेगा। ठीक है, जल्दी ही वह दुबारा टेवा लेकर आएगा।’

माघ बीतते-बीतते सूरज का रोब-दाब बढ़ने लगता है।

दोपहर तक ईंट ढोने के बाद सारी औरतें-लड़कियाँ नदी के दह में 'बोह' ले रही हैं।

गौने की चर्चा चल जाने के बाद विमली को रोज एक-दो बार ससुराल का सपना आता है। बात करते-करते अचानक कहीं खो जाती है। जगाने पर जागती है, बात-बात पर हँसने खिलखिलाने की आदत कहाँ गई?

अपने आदमी को देखने की कौन कहे, उसके बारे में कुछ सुना भी नहीं है विमली ने। ज्यादा नहीं, कुल तीन कोस दूर है उसकी ससुराल। अघोरी बाबा के मठ से तो दो ही कोस। लेकिन कभी मेला देखने के बहाने या बाजार-हाट भी नहीं आया इस तरफ! सुनती है - कलकत्ता गया है, कमाने-धमाने! उसका हाथ अनायास कलाई सहलाने लगता है - सीताराम! लेकिन जब भी कल्पना में सीताराम की कोई छवि देखना चाहती है विमली, डरेवर बाबू के सोने मढे दाँतों से फूटती हँसी छा जाती है सामने! पके कैथ की गंध!

धत्त।

सहसा वह जागती है - डरेवरजी इंतजार में बैठे होंगे। खाना बनाकर नहाने आई तो नहाती ही रह गई।

वह पानी से निकलकर जल्दी-जल्दी कपड़े बदलती है।

पीढ़े पर बैठते हुए मुस्कराते हैं डरेवरजी, "हम तो समझे, नदी से सीधे अपने घर चली गईं तुम?"

डरेवरजी उसे ध्यान से देखते हैं- चेहरे का तेज दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, शरीर गदराता जा रहा है। कितनी चमकती है देह!

डरेवरजी फिर एक बंडल बढ़ाते हैं विमला की तरफ - साड़ी, बिलाउज, पेटीकोट!

"ई का है?"

"पहना जाता है।"

"सो तो ठीक है लेकिन ई सब काहे लाते हैं आप? कौन पद से?"

"अब पद-वद तो तुम्हीं समझौ।"

"हम समझते हैं तबै न कहते हैं डरेवरजी, हमारा-आपका नाता साहेब-सलामत का है। हँसी-ठिठोली का! चीज-बतुस के लेन-देन मा तो कमरी भीज जाएगी। बहुत गुरू, बहुत गाढ़ पकड़ लेगी। हल्का बोझ ही अच्छा होता है डरेवर बाबू, जेतना आसानी से उठ जाए। इसको रखिए अपनी घरवाली के लिए।"

"तुम तो कभी-कभी पुरखिन बन जाती हो - " डरेवरजी बात को रसेदार बनाए रखना चाहते हैं।

रसेदार बात और रसेदार मुर्गा, दोनों बहुत पसंद हैं। डरेवरजी को।

"ई हमार 'चीन्ह' है विमला! 'चीन्ह' को लौटाने का 'मतलब' समझती हो?"

बड़ी-बड़ी आँखों से सीधे - आँखों में ताक रही है विमली। उसको एकदम बुद्धू समझते हैं क्या? 'मतलब' की बात समझाते हैं? खूब समझती है वह 'मतलब' की बात! 'मतलबी' कहीं के! वह बात बदलना चाहती है, "आज खान साहेब से काहे झक-झक कर रहे थे कोयला उतरवाते समय?"

"खान साहेब हेला के सार हैं। रुपये में तीन अठन्नी भँजना चाहते हैं। कोई कितने दिन घाटा-उधारी सहेगा?"

"इतना खाने-पीने का इंतजाम करते हैं - मुर्गा-मछली!"

"मुर्गा-मछली से भट्ठा चलता है कि कोयले से। सच तो यह है कि मैं तुम्हारा मुँह देखने की लालच में चला आता हूँ इतनी दूर, पंद्रह-सोलह हजार का कोयला लादकर। वरना इधर मुँह करके तो मैं...! बस तुम्हारे कारन! तुम्हारे कारन यह आदमी मुझे चूना लगाता जा रहा है।"

"हमारे कारन काहे?" विमली की जबान ऐंठ जाती है - "हमारा-आपका कौन नाता? जेतना दिन यहाँ आ रहे हैं, भेंट-मुलाकात बदी है, हो रही है! नही तो आप अपने रास्ते चले जाएँगे हम अपने।"

कितनी 'बेदरदी' बात कह दी विमली ने। डरेवरजी विसूरते रह गए बड़ी देर तक। "ऐतना' गोस्सा' काहे करती हो विमली। एक दिन तुम्हारे बप्पा के पास चलना है।"

"ऊ काहे?"

"कुछ माँगना है।"

"क्या?"

"तुम्हें!"

जोर से हँसी विमली! सुनकर सारा घाटा, सारी उधारी विसर गई डरेवर बाबू की।

बहुत-बहुत लड़कियाँ देखी हैं डरेवर बाबू ने। बिहार और यू. पी. में। लेकिन लड़की! जितनी नजदीक उतनी ही दूर! दूर-नजदीक साथ-साथ। धत्तेरे की।

डरेवजी कुछ सोचते हुए लोटा लेकर बाहर निकलते हैं।

कितने भरम में पड़ जाती है आदमी की जाति! दो बात हँस-बोल लेने से। कलकत्ते वाले उसके आदमी को क्या पता कि कितने 'जतन' से सँभालकर रखा है विमली ने उसकी अमानत! पके आम के पेड़ की रखवाली जैसा कठिन काम! कितनी निगाहें हैं, पके आम के पेड़ पर!

बिल्लर की बहन रमकल्ली आज दोपहर से ही घुसी है विमली की झोंपड़ी में। एक 'बात' लेकर आई है वह। बिल्लर और विमली दोनों के फायदे की। विमली के महतारी बाप के तो और भी फायदे की।

सुनते हैं विमली का आदमी तीन साल से घर नहीं आया कलकत्ते से। रुपया-पैसा भी नहीं भेजता बाप के पास। दिहाड़ी मजदूरी करता है। गुन का न सहूर का। अगर विमली की माई विमली को बिल्लर के साथ विदाकर दें... उन लोगों की जाति में यह कोई अनोखी बात नहीं है। महतारी-बाप के मर जाने से बचपन में शादी नहीं हो सकी वरना सौ लड़कों में एक लड़का है बिल्लर। डरेवरी करता है। चार पैसा कमाता है। राम-जानकी जैसी जोड़ी रहेगी दोनों की। गाँव में ही झोंपड़ी खड़ी कर दी जाएगी। आँख के सामने रहेंगे दोनों। विमली के माँ-बाप चाहें तो घर-जमाई बनकर रहने के लिए भी तैयार हो जाएगा बिल्लर। लड़के की कमी भी नहीं खलेगी। नहीं तो विमली के जाने के बाद कौन है एक रोटी बनाकर देने वाला दोनों को? लड़केवाला चाहेगा तो बिल्लर 'लगत' का हरजाना भी देने को तैयार है।

सोचने लायक सलाह देकर चली गई रामकली! दोनों बूढ़े-बूढ़ी शाम तक सलाह करते रहे। किसी तरह से कोई बुराई तो नजर नहीं आती इसमें। पंचायत में जो 'जुरमाना' 'लगत' के रूप में देना पड़ेगा उसे भी दे देगा। उन दोनों के दिमाग में पहले क्यों नहीं आई इतनी अच्छी बात?

"लेकिन विमली मानेगी तभी न!"

"विमली से पूछने की क्या बात है इसमें?" विमली का बाप बिगड़ता है, "उसे तो अपने दूल्हे की सूरत भी याद नहीं होगी। बचपन की शादी! बच्चों के खेल जैसी!"

रात में खा-पीकर सोते समय बात का मुँह पूरी सावधानी से धीरे-धीरे खोलती है बुढ़िया।

"लेकिन मेरा वियाह तो तू पहले ही कर चुकी है रे! फिर दूसरा घर करने की काहे सोच रही है?"

"वह लड़का तो कई साल से घर नहीं आया बेटी!"

"लेकिन जिंदा तो है। चिट्ठी-पत्री लिखने पर, वक्त-जरूरत क्यों नहीं लौटेगा? मेरा 'वियहा' है वह। क्या सोचेगा?"

"बिल्लर जाना-सुना, अच्छा लड़का है। अच्छा कमाता-धमाता है।"

"तो क्या मेरा आदमी लूला-लँगड़ा-काना है?"

"सो तो नहीं। लेकिन सुनते हैं नौकरी-चाकरी ठीक नहीं है। घर भी पैसा-कौड़ी नहीं भेज पाता।"

"हो सकता है अपने खाने भर को ही कमाता हो।"

"तब तुझे क्या खिलाएगा? क्या सुख देगा?"

"यह आज सोच रही है। पहले क्यों नहीं सोचा? क्या जरूरत थी बचपन में ही किसी के गले से बाँध देने की?"

"आज सोचने में क्या हर्ज है?"

"आज सोच सकती है अगर उसमें कोई खराबी हो। कम पैसे से ही कोई खराब हो जाता है, छोटा हो जाता है। वियाह तूने लड़के से किया था कि पैसे से? मेहनत करेगा आदमी तो एक रोटी कहीं भी मिलेगी। आदमी को अपनी मेहनत पर रीझना चाहिए कि दूसरे के पैसे पर रे?"

विमली उठकर बैठ जाती है खटिया पर, "कल को कोई दस बीघे वाला लड़का आ जाएगा तो तू कहेगी कि मैं उसी के साथ बैठ जाऊँ।"

सहसा उसे याद आता है - झोंपड़ी के कोने में नया हुक्का और तम्बाकू से भरी हाँड़ी रखी देखी है उसने। तम्बाकू में सने चोटे की गंध पूरी झोंपड़ी में फैल रही है। बिल्लरवा की बहन दे गई है यह सौगात? उसके बदन में आग लग जाती है। वह माँ को पकड़कर झिंझोड़ने लगती है, "दस रुपये के हुक्के-तम्बाकू पर तूने अपनी बिटिया को राँड़ समझ लिया रे? बोल! कैसे सोच लिया ऐसा? जिसकी औरत उसे पता भी नहीं और तू उसे दूसरे को सौंप देगी? गाय-बकरी समझ लिया है?"

"चुप-चुप-चुप! हल्ला मतकर राँड़!"

इस बार आया विमली का ससुर तो गौने का दिन तय करके ही वापस गया। दो दिन तक रुका था।

कुइसा मिस्त्री ने सुना तो अबोला रह गया। अँधियार करके चली जाएगी विमली भट्ठे पर। पाँच सौ रूपये तनखाह पाता है वह। पाँच विगहा खेत! विमली का आदमी तो सुनते हैं झल्ली ढोता है कलकत्ते में। क्या सुख देगा जनाना को? दो-तीन बार वह गया विमली के बाप के पास, चिलम पीने के बहाने। कुछ मन मुँह मिले तो

बात आगे बढ़ाए। लेकिन कितनी जलती हुई आँखें हैं बूढ़े की। बात करने जाइए तो घायल होकर लौटिए। आँखों से ही दाग देता है।

काम से मन उखड़ने लगा है कुइसा का। कभी 'लचारी' गाते हैं कभी बारहमासा :

लागै मास अगहन

जाय गौरी कै गवन

काटैं सैंया संग चयन

मोरे बालमुआ...

"लेकिन गोरी का 'गवन' तो माघ में पड़ा है कुइसा भाई।"

"माघ-फागुन का जाड़ा तो और भी गुलाबी होता है गनेशी भाय?"

ठाठ-बाट से गौना लेने आया है विमली का ससुर! बाजा, तमाशा! आतिशबाजी!

चनुवाडीह की नाच पार्टी। सौ-सौ ग्राम की गाँजे की पुड़िया। बक्सा भरकर दारू की बोतलें।

फिरी है सबके लिए, घराती हों चाहे बराती!

दोनों नशे इकट्ठे हुए तो बाजे के ताल पर बूढ़ा खुद घंटे भर नाचता रहा।

ए भाई! बूढ़ा काहे कहते हैं? चालीस-बयालीस से ज्यादा की उमर नहीं। पहलौठी का लड़का था सीताराम। बीस की उमर में पैदा हुआ। घरवाली नहीं गुजरी होती तो अभी तक बेधड़क बाल-बच्चे होते रहते।

बीस साल तक खुद चूल्हा फूँकता रहा। अब जाकर तवा-कलछुल से फुरसत का समय आया है। नाचेगा नहीं?

गाँव भर की औरतें झोंपड़ी के अंदर घेरा बनाकर ससुराल से आई एक-एक चीज की पड़ताल कर रही हैं। हाथ की अँगूठी! नाक की नथ! दो थान सोने के? पायल! बिछुए और हबेल! तीन थान चाँदी के। विमली की जाति में इतना जेवर कम ही लोगों को मिलता है। दुलहिन के कपड़े-लत्ते के साथ समधी-समधिन की पियरी धोती अलग से।

औरतें विमली के 'भाग' को 'सिहा' रही हैं।

बस एक साध रह गई। दुल्हा नहीं देख पाईं विमली का। उसे नौकरी से छुट्टी नहीं मिली... गाँव की औरतों को नाच भी बहुत पसंद आया।

बिल्लर कल से ही महेमानों की सेवा में लगा है।

सबेरे विदाई के समय खान साहब ने भी साड़ी भिजवाया। डरेवजी ने एक चादर और इक्यावन रुपये नगद दिए। पांडे खलासी ने ग्यारह रुपये।

"लेने-देने में विमली का बाप भी समधी से उन्नीस नहीं रहा। घड़ी, साइकिल, रेडियो, पाँच कूँड़ा बतासा, एक बोरा लाई, पाँच मन सीधा (राशन), एक बोरा आलू, एक बोरिया नमक, दो किलो तेल, एक किलो घी, रजाई, गद्दा, पलंग। गिरते-पड़ते दो ऊँट की लदनी।"

पहले माई का पैर पकड़कर रोती है विमली! फिर बप्पा का! फिर सखियाँ! पड़ोसिनें! भट्ठे की मजदूरिनें!

निमरी बकरी आज सबेरे से ही पूँछ हिला-हिलाकर चिल्ला रही है। डोली में बैठने से पहले उसे भी पकड़कर भेंटती है विमली। डोली उठती है तो वह चीत्कार कर उठती है। -

"आपन देशवा छोड़ाया मोरे बपई..."

आपन दुअरिया छोड़ाइउ मोरी माई..."

यह गाँव! यह देश! यह ढकुलाही, ये भीटे! कठ-जामुनों का जंगल! कल तक जिसे अपना समझती थी, आज हमेशा-हमेशा के लिए पराया कर दिया आपने बप्पा! अब कौन सबेरे आपको 'चाह' बनाकर देगा?

मेरा दुआर! मेरा मोहार! मेरा चूल्हा! मेरी चक्की! सबसे नाता टूट रहा है। कौन मेरी बकरी को चारा देगा? रोज सबेरे उठते ही मैं तेरी 'दुआरी' लीपती थी माई! उसे काहे छुड़ा दे रही है बिना कसूर?

सारे सपने, सारा पुरूषार्थ! छोड़ देने के लिए?

तिरिया जनम काहे देहु रे विधाता?

डोली पर पड़े 'ओहार' की फाँक से झाँककर देखती है विमली। यह छूटी बिसुई! यह बुढ़वा पीपल! कालीजी का मंदिर! खान साहब का भट्ठा! दोनों चिमनियाँ रोज की तरह धुआँ उगल रही हैं।

डोली देखकर राँची वाली औरतों का दल पल भर को रुक जाता है - विमली की डोली!

ट्रक खड़ा है। खलासी पांडे उघारे बदन घुटने तक लम्बा अंडरवियर पहने हाथ में बाल्टी लिये ट्रक धोने को तैयार खड़े डोली को देख रहे हैं। डरेवर बाबू उठे हुए बोनट के आगे खड़े देख रहे हैं।

अरे या मोरे चाचा?

आपन छंहिया छोड़ाया मोरे चाचा।

खान चाचा अपने ऑफिस से बाहर निकल आए हैं। आँखें भर आई हैं जैसे उनकी अपनी लड़की विदा हो रही हो। जहाँ भी रहे, सुखी रहे।

विमली उतरकर भट्ठे की मिट्टी को माथे से लगाना चाहती है।

लड़के और लड़की का 'फरक' आज ही मालूम पड़ा है विमली के बाप को। डोली की दिशा में ताकते हुए उसकी आँखों से झर-झर आँसू झर रहे हैं।

आज अचानक आया बुढ़ापा, बिना बताए।

दूर तक जाकर, विमली के रोने की आवाज के साथ ही डोली भी अदृश्य हो जाती है।

जब से पतोहू का गौना लाया है, विसराम का भाव बढ़ गया है।

चाल, ढाल, पहनावा-ओढ़ावा, दाढ़ी-मोछ, सब टिच्च! दो कट्ठा जमीन रेहन रखकर बादशाही खर्चा शुरू किया है। दिन भर झोंपड़ी के सामने गाँजे की महफिल लगा रहा है। एतना ठाट! काहे भाई? देखनेवालों को

अजगुत-अजगुत लग रहा है। कहीं कोई भेद? अभी तक तो यही चर्चा थी कि लड़के को गौने में क्यों नहीं बुलाकर लाया विसराम। लाख बाप से झगड़कर गया था लेकिन यह तो उसी का गौना था... फिर पतोहू के आने के तीसरे दिन ही बहन को क्यों विदा कर दिया? क्या इस डर से कि पतोहू को बिगाड़ देगी। 'बोलका' बना देगी।

इस टोले की औरतों की सूँघने की ताकत अभी इतनी कमजोर नहीं हुई है। लत्ता आग पर पड़ता है पीछे और चिरायंध औरतों की नाक में पहले पहुँच जाती है।

यहाँ तो सीधे आग लगी हुई है।

सुबह-शाम 'मैदान' आने-जाने के दौरान ही निर्विघ्न चर्चा का मौका मिलता है। इस बीच मनतोरिया की माई ने लाख कोशिश की, घुमा-फिराकर कोई 'सुराग' निकालने की, लेकिन पतोहू कुछ बोलती ही न थी। एकदम गूँगी। बोलती थीं उसकी आँखें। लाल सूजी आँखें। टुकुर-टुकुर ताकती हुई। उतरा मुँह! थका चेहरा! कसाई की गाय!

तब मनतोरिया की माई ने तह तक जाकर भेद खोलने का निश्चय किया। विसराम के इधर-उधर होने पर वह घुसी झोंपड़ी में। दारू की गंध से डूबी झोंपड़ी। खटिया के आसपास बिखरे अधजली बीड़ी के टोंटे।

पतोहू तो बीड़ी पीती नहीं!

अचानक चीख निकल गई मनतोरिया की माई की। पैर पकड़कर बैठ गई। तल-तल बहता खून? विसरमवा दाढ़ीजार ने टूटी बोतल का काँच बटोर कर रख दिया था कोने में। दो अंगुल का घाव हो गया उसके पैर में। चोरी से न घुसी होती तो लाख-लाख गालियाँ सुनाती।

"नई-नई लालटेन खरीदकर लाया है भाई। जब चाहे धीमी करो, जब चाहे तेज। ढिबरी की बत्ती तो हुचक-हुचककर जलती है।"

"पूरा विषधर है विसरमवा।" मनतोरिया की माई ने टोले की औरतों में ऐलान कर दिया है - 'घमासान' मचाए हुए है।

लेकिन मरदों का मामला तो मरद लोग ही खुले आम निपटा सकते हैं। औरतें क्या करेंगी?

और उसी रात सारा भेद औरतों के बीच से मरदों के कानों तक पहुँच जाता है।

मरदों के लिए यह खबर इतनी खास नहीं। औरतों का तो काम है इधर से उधर लबर-लबर करना। और यदि बात में कुछ सच्चाई भी है तो इतनी 'अनहोनी' जैसा क्या है इसमें? गुनी आदमी है विसराम। जानवरों की चोट, मोच, हारी-बेमारी में उसकी जरूरत पड़ती है हर घर को। फिर छोटे-बड़े की इज्जत करनेवाला। एकदम से तो उसके ऊपर उँगली उठाना ठीक नहीं... लेकिन बिलकुल चुप रहना भी सम्भव नहीं है। रात में हर 'घरवाली' जानना चाहेगी - क्या कर हे हैं टोले के 'मरद' लोग?

गाँजा-दारू का 'चानस' हाथ से बिलकुल ही न निकल जाए इसका ध्यान रखते हुए शाम की बैठक में 'मरद' लोग विसराम को तंग कर रहे हैं :

"विसराम भाई आपकी खटिया रात में नहीं दीखती बाहर। एकाध बार मैं इधर से गुजरा तो देखा दरवाजा सूना था।"

"काहे! तोहे पता नहीं कि आजकल बिगवा (भेंड़िया) का कितना जोर है। आए दिन सुनाई पड़ता है किसी की बकरी ले गया! किसी का बच्चा! रमवापुर में महतारी के कोरा से तीन साल का लड़का छीनकर ले गया। राजा पट्टी में एक औरत से लड़की छीन रहा था... ऐसे में बाहर सोने लायक है? तुम बाहरै सो रहे हो? आया किसी दिन तो..."

अब क्या बोला जाय? बात करने में विसराम को 'दाब' पाना आसान नहीं। और बिगवा का आतंक तो सचमुच चारों तरफ फैला हुआ है। औरतों ने अँधेरा होने के बाद छोटे बच्चों को लेकर बाहर निकलना बंद कर दिया है। दिशा-मैदान जाना है तो झुंड बनाकर जाओ। हाथ में हँसिया या कुल्हाड़ी लेकर। सुनते हैं औरतों या बच्चों पर ही ज्यादा जोर मारता है।

जब बच्चों को हाथ से छीन रहा है तो रात-बिरात सोते में हमला कर दे तो क्या अचरज? आदमी का खून अगर एक बार मुँह में लग गया तो... सुनते हैं, आदमी का मांस नमकीन होता है... आदत लगी तो छूट नहीं सकती।

लेकिन 'बात' के जोर पर कोई 'पाप' पचा ले जाएगा?

"झोंपड़ी में तो पतोहू सोती है विसराम भाई। उसमें तुम्हारा सोना।"

"झोंपड़ी में तो बीस साल से सोता आ रहा हूँ।"

"लेकिन अब बात दूसरी है। पतोहू के पास रात में, अकेले में... हम लोगों के कहने का मतलब... लड़के को भी नहीं बुला सके गौने में... तुम्हें अपने लिए अलग झोंपड़ी खड़ी करनी चाहिए। हम लोग भी आते हैं तो यहाँ पेड़ के नीचे बैठना पड़ता है..."

विसराम गाँजे की चिलम एक 'खींच' में जलाता है - 'लप्प'! नंगा करने पर अमादा हैं सारे के सारे लोग उसे।

"और लड़के को भी चिट्ठी लिखकर बुला लो। नहीं तो गाँव में तरह-तरह की बातें..."

"क्या तरह-तरह की बातें?" विसराम को गाँजा चढ़ चुका है। उसी का गाँजा पीकर उसी की जड़ खोदगा कोई? वह दहाड़ना चाहता है - लड़का आए साला, चाहे उमर भर न आए। पतोहू को 'खोराकी' से मतलब। और ऐसी-ऐसी चार पतोहुओं की खोराकी विसराम अभी अकेले 'पूर' सकता है।

लेकिन गाँजा उसका गियान नहीं हर सकता। वह चौधरी है। बात सँभालना जानता है, "हम खुद इसकी फिकर में हैं भाई। बहुत जल्दी जा रहे हैं लड़के को लाने और दूसरी झोंपड़ी की बात तो मैं खुद अगहन से सोच रहा हूँ, अब गन्ने की नई 'पाती' हो गई है तो दस-पाँच दिन में... दस आदमी के बीच में 'नक्कू' बनाने वाला काम खुद मुझे नहीं सोहाता। लेकिन मुँह से ऐसी-वैसी बात निकालने से पहले लोगों को सोचना चाहिए कि..."

"लोगों का मुँह कोई बंद नहीं कर सकता विसराम भाई। पूरे टोले में चर्चा है कि विसराम अँधेर मचा रहा है। बेटवा आएगा तो हाथ-पैर तोडेगा।"

फिर लगने वाली बात। कलेजे में लपक उठती है विसराम के। बेटवा के लिए पतोहुओं की कमी है उसे? अभी तीन मंडा खेत बाकी हैं। रेहन रख दे तो तीन हजार मिलेंगे। तीन पतोहुएँ! लेकिन...

"दूसरे के फटे में दुनिया पैर डालने को दौड़ती है भाई! कोई सीना चीरकर तो दिखा नहीं सकता! लेकिन कहा गया है। बात करै जानि कै। पानी पियै छानि कै। हर मर्द की 'मोछ' होती है। इज्जत होती है।"

बात में वजन डालना जानता है विसराम। और जहाँ 'मर्द' की 'मोछ' का, 'इज्जत' का सवाल हो, जब तक कोई रंगे हाथ न पकड़ ले या जब तक 'जनाना' खुद मुँह न खोले, सुबह-शाम की 'चिलम' दाँव पर रखकर कोई कितना नंगा करे किसी को।

मौछें अभी तक काली हैं विसराम की। वह 'मोछ' ऐंठता है।

लेकिन मोछ ऐंठने से क्या होगा? विसराम का दर्द तो विसराम ही जानता है!

शुरू-शुरू में तो नई पतोहू जैसा शरम-लिहाज था। रीं-रीं करके रोना - हम बिटिया बराबर अही। आप बाप बराबर। रो-रोकर पैर छान लेती थी दोनों हाथों से। लगता था अब ढीली पड़ी कि तब। लेकिन बाद में तो बिल्ली जैसी खूँखार। वैसी ही गुर्राहट! पंजे मारना। हाथ झटकना। बिल्ली जैसे नाखून! सारा मुँह, नाक, कान, नोंच लिया है। पूरा चेहरा 'परपरा' रहा है। जलन! ईंट-पत्थर ढोते-ढोते सारा शरीर लोहे का हो गया है ससुरी का। तीन दिन में तीन करम कर दिया। दोनों पैर सिकोड़कर ऐसा सधा वार किया छाती पर कि विसराम उताने दूर जा गिरा खटिया से। तब से छाती और सिर में भयानक दर्द! अपने शरीर पर बड़ा गुमान था विसराम को। क्या सचमुच 'जाँगर' घट गया है?

जानवरों का बिना डिगरी का डाक्टर है विसराम। बड़े-बड़े बैल-साँड़ रीढ़ की हड्डी दबाकर बैठा देता है। काबू में करता है। आज तक कोई जानवर बेकाबू नहीं हुआ... और यह 'उदंत' बछिया पुट्ठे पर हाथ नहीं रखने दे रही है... यह अंदर का दर्द किससे कहने जाए विसराम? 'मोछ' ऐंठने से क्या होगा? झूठी बदनामी हो रही है, सो अलग। लात खाकर उसके मन में भय समा गया है। आज की रात वह दूर से ही भौंकेगा।

"बड़ी सती सावित्री बनती है? सारा गाँव नहीं गंधवा दिया था तूने?"

"सारा नखड़ा घर में ही दिखाएगी तू?"

बोलना बंद कर दिया है विमली ने। रोना भी। जैसे गूँगी हो गई है।

"डरेबरवा के साथ गुलछर्रे नहीं उड़ाती थी तू?"

"झरिया-धनबाद की सैर करने मैं गया था?"

"और बनारस की ठंडाई? हुँह, ठंडाई! बड़ी ठंडाई पिलाई है साले ने, एकदम ठंडा कर दिया है।"

"ऐतना कपड़ा-लत्ता, साड़ी-बिलाउज, गहना-गुरिया? सब बाप की कमाही है? लूले साले की? वह करेगा बेटी की दुकानदारी और तू यहाँ आकर..."

"अच्छा बता, कुड़सा मिस्त्री से दो हजार रुपये में तेरी बिदाई का सौदा नहीं तय किया था तेरे बाप ने? उठा गंगा। मैं अंधा हूँ कि बहरा?"

"मेला देखेगी? जलेबी खाएगी? गंगा असनान करेगी?"

"डरेवरवा की दारू महकती है और मेरी गंधाती है? नाक बंद करती है? क्या-क्या बंद करेगी?"

"गुलछर्रा उड़ाएँगे दूसरे और खेत रेहन रखा जाएगा विसराम का?"

"मुझसे बोलने में भी पाप लग रहा है रे? तिरिया चरित्तर फैलाने से जान बचेगी? साली कातिक की कुतिया!"

जैसे-जैसे छाती का दर्द बढ़ रहा है विसराम का क्रोध भी बढ़ रहा है। मुँह में फिचकुर आ गया है। सारा शरीर काँप रहा है।

पैर सिकोड़कर घुटने को अंकवार में बाँधकर, उसी में सिर गड़ाए बैठी है विमली। जैसे कोई साही दुश्मन के आक्रमण की आशंका में बैठी हो काँटा फैलाकर! दूर से ही भूँक रहा है विसराम। पास जाते ही एक काँटा तीर की तरह छूटेगा - सन्न!

जान साँसत में पड़ी है विमली की। किसी तरह पत-पानी के साथ मायके पहुँच पाती अगर... या उसका आदमी आ पहुँचता अचानक। नहीं तो हर रात-जंगल की रात! एक रात-एक जुग। किसी से कहे भी तो क्या? क्या करेगा कोई सुनकर हँसने के सिवा? भरी पंचायत में खड़ा होना पड़ेगा अलग। और ऐसे-ऐसे नंगा कर देने वाले सवाल पंचायत के चौधरी लोग, रस ले-लेकर पूछते हैं कि... उसे खूब पता है। नैहर तक बदनामी अलग से।

हाँ, मनतोरिया की माई से अपने आदमी का 'पता' मालूम करवाया है उसने। चिट्ठी भी लिखवा दिया है। चौथे दिन चिट्ठी पहुँचेगी कलकत्ता। मायके भी खबर भिजवाया है - बप्पा को मालूम हो कि खबर पाते ही आकर लिवा चलें । देर हुई तो बिटिया की लहास ही देखेंगे।

बप्पा और 'आदमी' की राह देखती विमली।

कुइसा मिस्त्री अपने गाँव चले गए - जिला बलिया!

हिसाब-किताब करने में आना-कानी किया खान साहब ने तो बिना हिसाब किए चल पड़े। बोलते थे, अब गया-जगन्नाथजी दर्शन करने जाएँगे इस साल। अगले सीजन में आएँगे कि नहीं? कह नहीं सकते। आदमी की जिनगी का कौन ठिकाना। दाढ़ी-मोछ के बाल पकड़ने लगे। गठिया बतास जोड़ पकड़ने लगा। माया का फंदा धीरे-धीरे काटना होगा...

"माया केरी पूतरी, तन तरकस मन बान!

तिरिया धावै रथ चढ़ी, पुरूखहिं करै निशान!"

विसराम के सुभाव में इधर काफी फरक आ गया है। उधर दो-तीन दिन बाहर पेड़ के नीचे खटिया बिछाकर सोया। फिर बाँस-पाती आदि का जुगाड़ करके अलग मँड़ही खड़ी कर लिया, छोटी-सी। अब उसी में सोता है। दिन का ज्यादा समय शिवाले पर गुजारता है। गंजेड़ियों की भीड़ जो बीच में उसके दरवाजे पर जमने लगी थी, अब फिर पहले की तरह शिवाले पर जमने लगी है।

पहले दिन विसराम ने बाहर खटिया बिछाई तो अचरज के मारे विमली को सारी रात नींद नहीं आई। किवाड़ के अंदर से बिलारी बंद करके मूसर की टेक लगा दिया था फिर भी दिल धड़क रहा था। बुढ़वा की मति का क्या ठिकाना। कोई नई चाल! जरा-सी आहट पाते ही चौंककर उठ बैठती।

बड़े सबेरे उठते ही खरहरा लेकर दुआर-मोहार बुहारता है। पहले दिन झाड़ू लगाकर जाने कहाँ से एक गिलास दूध लाया था और उसके हाथों में थमाते हुए बोला था, "जरा एक गिलास 'चाह' बनाना बहू! सुनते हैं तेरे हाथ की चाह पिए बिना समधी लोटा नहीं उठाता था।"

कितनी मिठास थी आवाज में! कितना दुलार!

चाय का गिलास पकड़ते हुए हाथ काँप रहे थे विमली के। आँखों में पानी। गिलास पकड़ते हुए विसराम की आँखें नीची थीं - इतना बदलाव! कई दिन बाद एक दिन शाम का खाना खाते हुए खुद कहने लगा, "मै बहुत शर्मिंदा हूँ बहू! अगर तूने माफ नहीं किया तो नर्क में भी जगह नहीं मिलेगी मुझे। किसुनवा ओझा ने गाँजे में कोई बूटी मिलाकर पिला दिया था। मति भरिष्ठ कर देने वाली बूटी। उसी से हफ्ते भर सिर पर पाप सवार था और हफ्ते भर में मेरी मरजादा का नाश हो गया बिटिया! शिवाले के पुजारी बाबा ने विचारकर नाम खोला। कई दिन से मैं उनकी 'सरन' में बैठ रहा हूँ। किशुनवा को मैंने तीन साल में कितना गाँजा पिलाया होगा और उसकी बदी इस तरह दिया बेईमान ने। मुँह में कालिख लगाने का इंतजाम कर दिया था घटियारे ने। तेरी जैसी लक्ष्मी बहू न होती तो कहाँ मुँह दिखाते हम लोग। कल को मेरा बेटा लौटता तो किस घाट लगता? लक्ष्मी है बहू, तू लक्ष्मी है, जो अपना पानी और मेरी पगड़ी, दोनों बचा ले गई। मैं पापी..."

आँखें भर-भरा गई थीं विसराम की। गला रुँध गया था। विमली को भी लगा कि वह 'भोंकार' छोड़कर रो पड़ेगी। किस जनम का बदला लेना चाहता था वह ओझा? विमली बड़ी देर तक विसूरती रही थी। उसे लग रहा था जैसे जुगों की तपन के बाद धीरे-धीरे कलेजे में ठंडक पैठ रही है।

रात लेटे-लेटे देर तक सोचती रही वह। खान साहब कहते थे - सच्चाई को कोई छिपा नहीं सकता। सच्चाई को कोई दबा नहीं सकता। सच्चाई को कोई हरा नहीं सकता। सच्चाई आखिर सच्चाई होती है।

पास-पड़ोस के लोगों को भी देखकर अचरज होता है कि सचमुच पानीदार आदमी है विसराम। जरा-सा मजाक-मजाक में टोका-टाकी हुई और उसे बात लग गई! मरजादा वाला आदमी! चार दिन में अलग मँड़ई खड़ी कर दिया। ऐसे ही तो जात-बिरादरी किसी को चौधरी नहीं मान लेती। किसी के खिलाफ मुँह खोलने के पहले हजार बार सोचना चाहिए। औरतों के कहने में आकर लोग उसे बेज्जत करने पर आमादा थे। ठीक ही कहते हैं - नाक न हो तो औरतें मैला खा लें।

दुआर-मोहार बुहारने के बाद विसराम ने बाहर से ही ऊँची आवाज में बताया, "दोपहर में खाने नहीं आएगा वह आज। शिवाले पर सत्यनारायण की कथा कहवा रहा है। तब तक 'बरत' रहेगा। बहू अपना खाना-पीना कर ले। वह एक ही 'टेम' शाम को खाएगा। गंगा जल का छिड़काव करके झोंपड़ी 'पवित्तर' करने और 'चरनामरित' ग्रहण करने के बाद।'

तब तो विमली भी रहेगी बरत! इतने बड़े सकंट से उबार लिया सत्यनाराण सामी ने। उसके ससुर का दिमाग सही कर दिया। पहले पता होता तो वह चाह भी न पीती... सत्यनाराणजी की कथा घर में होनी चाहिए थी। पहले याद पड़ा होता तो जरूर कहती। अब तो जा चुका ससुर! उसका मन, शरीर थिर हो रहा है - ठंडा!

दोपहर तक मेहनत करके विमली ने पूरी झोंपड़ी को लीपा है अंदर-बाहर। हफ्तों बाद चैन आया है उसके मन में। लग रहा है वह मालकिन है इस झोंपड़ी की, अपनी ससुराल की। उसका आदमी 'कमाने गया है' परदेस। बूढ़े ससुर के रोटी-पानी का इंतजाम तो उसी के जिम्मे है। शाम होते ही वह खाना बनाने में लग जाती है।

कल ही उसका बाप आनने आएगा। मनतोरिया की माई ने बताया है। खबर न भेजती तो क्या करती? लेकिन अब तो न आए बाप तो भी कोई बात नहीं। चार दिन बना-खिला दे ससुर को। उसके जाने के बाद तो फिर अपने ही हाथ, से 'पाथना' होगा मोटी-महीन!

...जल्दी ही लौटेगी मायके से। अब तो यही उसका घर-दुआर है। उसका आदमी भी किसी समय आ सकता है। चिट्ठी पहुँच गई होगी।

एक घंटा रात बीतते आता है विसराम। एक हाथ में 'चरनामरित' की हाँड़ी और दूसरे में पंजीरी का दोना।

ऐ! झोंपड़ी लिपी-पुती शुद्ध!

"मैं तो लक्ष्मी ही कहकर पुकारूँगा अब तुझे बहू। मना मत करना। ए ले गंगाजल की बोतल! हाथ-पाँव धोकर पूरी झोंपड़ी में छिड़क दे। फिर परसाद 'ग्रहन' कर ले। हाँ! मैं तो वहीं ग्रहण कर चुका। भूख के मारे हालत खराब थी। यह परसाद सारा तेरे लिए ही है।"

"ज्यादा है? एक लोटा चरनामरित ज्यादा है, सबेरे से ही बासी मुँह पड़ी है तू! और यह जरा-सी पंजीरी!"

"अच्छा ज्यादा है तो थोड़ा-सा ढँककर रख दे अपने बप्पा के लिए। हाँ, मैं तो बताना ही भूल गया। कल ही तेरे बप्पा आ रहे हैं लेकिन 'चरनामरित' तो पूरा पी ले। कल तक तो उसका दूध फट जाएगा।"

"नहीं खाने की अब जगह ही नहीं रह गई बिलकुल। मैं जरा एक चिलम... सबेरे से हाथ नहीं लगाया है चिलम को।"

विसराम के बाहर जाने के बाद विमली परसाद को झोंपड़ी के बीचोबीच जमीन पर रखती है। जमीन से छुआकर माथा टेकती है - हे प्रभु!

पंजीरी कितनी मीठी लग रही है। भगवान का बास जो हो जाता है। और 'चरनामरित' तो सचमुच ही अमरित। एक गिलास अमरित!

'धक्का' जैसा लगता है विमली को। कहते हैं खाली पेट में अन्न पहुँचता है तो ...अन्न में भी नशा होता है... लेकिन इतनी सुस्ती। हाथ-पाँव ढीले पड़ते जा रहे हैं। वह खटिया पर लुढ़क जाती है - बस दो पल लेट ले।

गाँजे की चिलम चटकाकर झोपड़ी में घुसता है विसराम। लालटेन की रोशनी में देखता है। कुतवा 'चरनामरित' की हाँड़ी चाटकर वहीं जमीन पर फैल गया है। विसराम धीरे से लात मारता है कुतवा आँख खोलकर बेगाने ढंग से ताकता है। लड़खड़ाता हुआ बाहर तक जाता है। और फिर लुढ़क जाता है।

'चरनामरित' और कुत्ता पीए? बंदे-बंदे की बात!

खटिया पर चित्त पड़ी है विमली, बेसुध!

विसराम धीरे-धीरे हिला-डुलाकर देखता है। कोई हरकत नहीं। असर कर गई है। गुरू ने बताया था - जो जानवर किसी तरह काबू में न आए उसके लिए - अफीम!

अफीम का चरनामरित या दूध का? पहचान सकते हैं आप - देखकर? सूँघकर? चखकर?

विसराम के हाथ-पैर में सनसनाहट होने लगी है। वह झोले से तली हुई मछलियों की पोटली और बोतल निकालता है। दिल इतनी तेजी से क्यों 'धड़धड़ा' रहा है? जैसे डाकगाड़ी का इंजन!

बत्ती तेज करके लालटेन सिरहाने टाँग लेता है विसराम!

अचानक विमली को लगता है उसके सीने पर वजनी पत्थर रख उठा है। लेकिन लाख कोशिश के बावजूद पलकें उठती नहीं। जैसे मनों बोझ लद गया हो।

ऐ! क्या हो रहा है? झोंपड़ी हिल रही है या खटिया? मुँह नोच लेगी वह। आँखें फोड़ देगी। लेकिन हाथ-पैर में जुम्बिस क्यों नहीं होती?

विसराम के शरीर में बाघ की ताकत आ गई है। डाकगाड़ी का इंजन - झक्! झक्! झक्!

बप्पा रे ए-ए! वह चीखना चाहती है लेकिन सिर्फ गों-गों करके रह जाती है। कोई वश नहीं! जैसे अतल समंदर में डूबी जा रही हो।

एक युग बीत गया हो जैसे। विमली को ठंडक लगती है। आँखें खुल जाती हैं। शरीर अभी पूरी तरह वश में नहीं है। रजाई नीचे गिरी है। सिरहाने लालटेन जलती जा रही है। कपड़े अस्त-व्यस्त! पूरा शरीर टूट रहा है।

खटिया से नीचे उतरती है वह। पैर सीधे नहीं पड़ रहे हैं। वह कपड़े ठीक करती है।

खाली बोतल नीचे लुढ़की पड़ी है। मछली के काँटे! बीड़ी के टोंटे! पूरा बंडल खतम किया है शायद! दीवार पर थूकी पान की चार-पाँच पीकें!

कुत्ते की चाटी 'चरनामरित' की हाँड़ी औधी पड़ी है, लालटेन रह रहकर भभक रही है।

चेतना आते ही उसे रुलाई छूटने लगी है - धोखा! छल! कहाँ-कहाँ से किन-किन खतरों से बचाती आई थी वह पराई अमानत! कितने बीहड़ कितने जंगल? कितने जानवर? कितने शिकारी! और मुकाम तक सुरक्षित पहुँचकर भी लुट गई वह! मेंड़ ही खेत खा गया छल से! ऐसी बेहाश कर देने वाली नींद आई कैसे? उसकी खुद समझ में नहीं आ रहा है।

अपनी आन-बान से जीने वाली 'मादा' यहाँ 'मिट्टी' कर दी गई जबरन! लाड़-प्यार से नाकाम छुई-मुई पढ़वैया लड़की है वह? कि चुपचाप जला दी जाएगी? मार दी जाएगी? उसके खून में मेहनत की आँच है। उसे कोई 'दासी' बनाकर रख पाएगा?

सहसा रुलाई गायब हो जाती है। बुझी-बुझी आँखों में चमक उभरती है। क्रमश: दीप्त होती चमक! बिल्ली की आँखों की चमक देखा है कभी अँधेरे में? नीली चमक! जलती आँखें!

झोंपड़ी के एक कोने में खूँटी पर मिट्टी के तेल की बोतल लटक रही है। बोतल उतारकर वह ताखे से माचिस उठाती है और विसराम की मँड़ही की तरफ लपकती है। उसकी आँखो में मँड़ही के अंदर खटिया पर बेसुध पड़ा विसराम का काला अधनंगा शरीर नाच रहा है। युगों की भूख मिटाकर बेखबर सोया पड़ा तृप्त-संतृप्त दैत्य! खुले मुँह से बहती पीक की धार? गंदा तन-गंदा मन!

सारी गंदगी, बदबू, छल और धोखा जलाकर राख कर देगी वह। और कोई राह नहीं।

अँधेरी मँड़ही! बाध पर गिरते तेल की आवाज ने बताया - खटिया सूनी है। छूकर देखती है। कोई नहीं। कथरी सिरहाने रखी हुई है। कहाँ गया? निराश हाथों से बोतल और माचिस छूट जाते हैं। अब?

पौ फटने लगी है। रुलाई बार-बार उमड़कर गले में फँस रही है। तो क्या इसी नर्क में आगे भी? न अब एक पल भी नहीं रुक सकती वह यहाँ। अपने आदमी का पता है और गौने में साथ लाए टिन के बक्से में उसकी गिरस्थी। झोंपड़े में लौटकर वह जल्दी-जल्दी सब कुछ समेटती है। और बाहर निकल पड़ती है। कैसा होगा कलकत्ता शहर! उस शहर में उसका आदमी? उसने तो कभी यहाँ का रेलवे-स्टेशन तक नहीं देखा। गाड़ी की सीटी और गड़गड़ाहट से केवल दिशा का अंदाजा लगाती थी।

शिव हो! शिव हो!

इस बार आवाज ज्यादा साफ है।

पुजारीजी उठकर झरोखे से झाँकते है। सामने शिवाले की सीढ़ियों पर कोई छाया लेटी है। 'पट' खोलने के पहले वे आश्वस्त हो जाना चाहते हैं। इस गाँव के लोगों का विश्वास नहीं। मौका पाने पर दिन में ही टाठी-लोटा तक पचा जाने को तैयार! रात की तो बात ही दूसरी है।

"कौन?"

जय शंकर! जय शकंर!

जानी-पहचानी आवाज! पट खोल देते हैं। टार्च की रोशनी में देखते हैं - साष्टांग लेटा भक्त-विसराम! विसराम उठकर पुजारी जी के चरण छूता है।

गदगद हैं पुजारीजी! लंका में विभीषण! इस आदमी में भक्ति भाव कितनी जल्दी कितने गहरे पैठ रहा है। साँझ को भी बार-बार भेजने पर 'परसाद' लेकर घर जाते-जाते नौ बजा दिया था। फिर लगता है आधीरात से ही 'चरनों' में हाजिर हो गया। बड़ी देर से उनके उनींदे कानों में आवाज पड़ रही थी।

पुजारीजी विसराम को उठाकर गले से लगा लेते हैं। फिर आकाश की तरफ देखकर रात का अंदाजा लगाने की कोशिश करते हैं। पौ फटने में अभी कुछ कसर है।

वे बाती जलाकर उजाला करते हैं।

विसराम पुजारीजी की आसनी के पैताने बैठकर अपने मन की दशा बताता है। शंकर भगवान के चरणों को छोड़कर और कहीं मन नहीं लग रहा है बाबा! बड़ी बेचैनी है। बहू को परसाद देकर सोने की कोशिश की। लेकिन बड़ी देर तक नींद नही आई। जरा-सी झपकी लगी थी तो बड़ा खराब सपना! देखा कि मेरी झोंपड़ी के बीचोंबीच जमीन पर लक्ष्मीजी बिराज रही हैं। सोने के गहनों से लदी काया! कि अचानक कहीं से एक काली डरावनी-सी राक्षसी काया आकर उन्हें घेर लेती है। लक्ष्मीजी 'अलोप' हो जाती हैं। बचता है खाली अंधकार! हड़बड़ाकर आँख खुली तो लगा कोई काली-सी छाया मेरी झोंपड़ी से निकलकर अँधेरे में समा गई है। तब से चित 'थिर' नहीं हो रहा है। लक्ष्मी का इस तरह घर छोड़कर जाना। क्या मतलब है इस सपने का?

पुजारी मंद-मंद मुस्कराते हैं? "लगता है साँझ के गाँजे का नशा भक्त विसराम के 'बरम्हांड' तक चढ़ गया है। तभी ऐसी बेचैनी होती है। घबड़ाने की बात नहीं। धूनी-आरती के बाद 'जोग-मुद्रा' में बैठूँगा तो 'विचार' लगाऊँगा।"

आरती की घड़ी-घंटा, डमरू और सम्मिलित ध्वनि शिवाले पर गूँजी तो गाँव की सीमा छोड़ती विमली ने बक्सा नीचे रखकर दोनों हाथ जोड़कर सिर झुकाया - आगे तुम्हीं साथी-सहारे हो प्रभु!

आरती के बाद उपस्थित भक्तों के सामने आज पहली बार भक्ति-भाव में तन्मय होकर दोहे-कवित्त-भजन सुनाया विसराम ने -

करी पाती खात है, ताकी खैंची खाल।

जे नर बकरी खात है, ताकी कौन हवाल।।

पुजारीजी ने भविष्यवाणी की कि साधना जारी रही तो भक्त विसराम अच्छा 'भजनीक' बनेगा।

शिवाले पर बैठे-बैठे काफी समय तक किसी 'अनहोनी' का इंतजार करता रहा विसराम! अफीम का नशा टूटते ही कोहराम मचा सकती है। लेकिन एक घंटा दिन चढ़ने के बाद भी कहीं कुछ सुनाई नहीं पड़ता तो उसे अपना भय बेमानी लगने लगता है। घर लौटने में कोई हर्ज नहीं।

लेकिन झोंपड़ी के पास पहुँचते-पहुँचते कदम अपने-आप धीमे पड़ने लगते हैं। जाने पतोहू का कौन-सा रूप देखने को मिले? दिल धड़क रहा है... लेकिन क्यों? वह तो करीब-करीब सारी रात शिवाले पर बिताकर लौट रहा है। शाम को आया तो परसाद देकर फिर लौट गया बिना खाए-पिए। अगर कोई ऐसी वैसी बात हुई है तो इसका मतलब पतोहू की मरजी से ही कोई घुसा होगा झोंपड़ी में! जब तक यह अंदर से दरवाजा नहीं खोलती, कोई कैसे घुस सकता है। मायके से ही इस मायने में बदनाम रही है।

झोंपड़ी का दरवाजा तो चौपट खुला है। सन्नाटा! चूड़ी तक की आवाज नहीं। वह अंदर झाँकता है। कोई नहीं! ऐं! बक्सा गायब है बहू का। कहाँ गई? वह बाहर निकलकर अगल-बगल और पिछवाड़े का एक चक्कर लगाता है। भाग गई? कहाँ गई होगी?

उसका आत्मविश्वास पूरा-पूरा लौट आया है। जोर से साँस खींचकर फेफड़ों में हवा भरता है। पतोहू का भागना तो गुस्सा करने की बात है। रात झोंपड़ी में कुछ खटर-पटर तो सुना था उसने। किसी को निकलते भी देखा था। पर इतनी दूर तक नहीं सोच पाया... ओ! खाली हाथ नहीं, उसकी मेहरारू का गहना-गीठी भी खोदकर ले गई है। डेढ़ किलो चाँदी के गहने, दस चाँदी के रुपये महारानी विक्टोरिया के जमाने के। एक सोने की मुहर! सब कुछ

हाँड़ी में रखकर जमीन में गाड़ा गया था... वह दौड़कर अपनी मँड़ई से कुदाल लाता है और झोंपड़ी का एक कोना तेजी से खोदने लगता है। यहीं से ले गई खोदकर।

फिर कुदाल छोड़कर हाथ-पैर की धूल झाड़ता है और बाहर आकर 'हल्ला' करने लगता है - दौड़ो रे भइया! अरे जगेसर भाई! ललई काका! ई तो हरजइया निरधन करके भाग गई हो। हे भगवान! कहाँ दौड़ी? केका गोहराईं?

का भवा? का भवा? एक-एक करके इकट्ठा होने लगे हैं टोले के औरत-मर्द-बच्चे! थोड़ी देर में पूरे गाँव में हल्ला हो जाता है।

"विसराम की पतोहू भाग गई, किसी के साथ।"

"हाँ विसराम ने रात किसी को झोंपड़ी से निकलते देखा था। सोचा बहू दिशा-मैदान के लिए निकली होगी।"

विसराम लोगों को वह जगह दिखा रहा है जहाँ से गहना खोदकर ले गई है पतोहू! कुदाल अभी तक वहीं पड़ी है। गहने के अलावा दस चाँदी के रुपये और एक सोने की मुहर! तब तक लोगों की नजर दूसरे कोने पर जाती है। लालटेन अभी भी धीमी लौ में जल रही है... एक औरत के पैर में मछली का काँटा गड़ गया। खटिया के नीचे दारू की खाली बोतल। जली बीड़ी के अँजुरी भर टोंटे। पान की पीक से रंगी हुई दीवार। अब किसी को और कुछ बताने की जरूरत है? खुला खेल हुआ है रात भर! विसराम ससुर शिवाला रखा रहे हैं और कथा सुन रहे हैं, यहाँ असली कथा हुई है रात भर। इसकी खबर नहीं।

पूरा गाँव झोंपड़ी के अंदर का दृश्य देख लेना चाहता है। एक निकलता है तो दस घुसना चाहते हैं।

दुआर पर रखे पुआल की गंजहर से टेक लेकर, दोनों हाथों से सिर थामे बैठा है विसराम। सैकड़ों सवाल! जो भी आता है, नए सवालों के जवाब चाहता है।

टुकड़े-टुकड़े में किस्से के सिरे निकलते हैं दुखिया विसराम के मुँह से। एक किस्सा हो तो बताए कोई! नैहर में तो इसके पीछे रोज एक किस्सा तैयार होता था। इतने किस्से पीछे छोड़कर आई थी कि बताने लगे तो पूरी रामायण बन जाएगी। अब तक तो इज्जत का खयाल करके चुप रहता था विसराम। अब क्या रह गया छिपाने को। एक डरेवर था टरक का। उसके साथ कई बार गई थी झरिया-धनबाद घूमने। एक और छोकरा था। मेला घुमाने ले जाता था। एक मिस्त्री था, गहने गढ़ा-गढ़ाकर पहनाता था। विसराम ने सोचा था, आँख ओट पहाड़ ओट। साथ छूट जाएगा तो सारा किस्सा अपने-आप खत्म हो जाएगा। सपने में भी नहीं सोचा था कि लोग यहाँ तक धावा बोलेंगे। भगवान जाने कौन-कौन कब से आता था। नैहर से भाग जाती तो कम-से-कम विसराम की और इस गाँव की नाक तो न कटती!

गाँव की नाक! इस तरफ तो किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। गाँव की नाक काटकर भाग जाएगा कोई और गाँव के लोग चुपचाप देखते रहे जाएँगे?

किधर गई होगी? नैहर? किसी के साथ भागेगी तो नैहर क्यों जायेगी। गाड़ी पकड़ेंगे लोग, या बस। रेलवे स्टेशन और बाजार की बसों की तलाश होनी चाहिए। अगर रातवाली गाड़ी से निकल गए होंगे तब तो गए हाथ से। अगर दस बजिया गाड़ी पकड़ने की ताक में होंगे तो बच के नहीं जा सकते।

बात की बात में आठ-दस साइकिलें निकल आती हैं। दो गोल बन गई है। एक गोल बसों और टैक्सियों में खोजेगी, बाजार में। दूसरी रेलवे स्टेशन देखेगी। एक-एक साइकिल पर दो-दो तीन-तीन लोग।

तब तक एक औरत की नजर विसराम की मँड़ई में खटिया के नीचे लुढ़के मिट्टी के तेल की बोतल और तेल से गीले, माचिस पर पड़ती है। खटिया के बाध और सिरहाने रखी कथरी पर मिट्टी का तेल गिरा है। एक बार फिर पूरी भीड़ मँड़ई को घेरती है।

विसराम भी उठकर आ जाता है। इसका मतलब शंकर भगवान ने ही उसके प्राण बचाए। भोर में ही वह शिवाले पर नहीं गया होता 'आरती' करने तो इस समय उसकी जली हुई लहास ही दुनिया देख रही होती। शिव हो! शिव हो!

ऐसी खतरनाक जनाना तो आज तक इस गाँव में नहीं आई थी, भाई!

औरतों में चरित-चर्चा चल रही है। किस-किस औरत ने कब-कब गाँव की नाक काटनेवाला काम किया था। किसको संदेह था इस औरत की बदचलनी पर।

गायें-भैंसे खूँटे पर रँभा रही हैं। उन्हें खोलकर चराने ले जाने वाला कोई नहीं है। छोटे बच्चों को इस तमाशे में कोई रुचि नहीं, लेकिन उन्हें रोटी-पानी देनेवाला कोई नहीं है। गाँव में तरकारी-भाजी सिर पर लादकर बेचनेवाली मुराइनों का सौदा लेनेवाला कोई नहीं है। सभी विसराम के दरवाजे पर। दूरदराज घरों की औरतें विसराम के टोले की औरतों की 'बकलेली' पर तरस खा रही हैं। इतनी बड़ी बात सूँघ नही सकी कोई। उल्टे विसराम को ही बदनाम करनेवाली उल्टी-सीधी खबर उड़ाती थी मनतोरिया की माई।

"अरे, मनतोरिया की माई भी तो अपनी भरी जवानी में पूरे गाँव को न्योतती घूमती थी। अपना 'पच्छ' सभी को भाता है।" डीजल की महतारी हाथ फेंककर अचानक आवाज ऊँची कर देती है।

"टोलेवालों के ताने सुनते-सुनते विसराम के दिल में घाव हो गया था। झूठा अकलंक। बेचारे ने रात-दिन एक करके अपने सोने के लिए अलग मँड़ई तैयार किया।" बाल विधवा बिरजा कहती है।

"वही तो गलती हुई।" डीजल की महतारी चीख-चीखकर बोलती है - "न झूठा अकलंक मनतोरिया की माई लगाती न विसराम दूसरी मँड़ई छवाता, न बहू को खुलकर खेलने का मौका मिलता, न आज गाँव की नाक आधे पर से कटती।"

डीजल की महतारी मनतोरिया की माई का नाम 'सानना' नहीं भूलेगी। जहाँ पिछले साल मनतोरिया के छोटे भाई का बियाह हुआ है वहाँ डीजल की शादी दो साल पहले से तय थी। इसी औरत ने डीजल का रिस्ता कटवाकर अपने लड़के का रिस्ता जोड़ लिया। बियाह में मिली मुर्रा भैंस जब तक मनतोरिया की माई के खूँटे पर रहेगी डीजल की माई का कलेजा ठंडा कैसे हो सकता है? दस किलो दूध देनेवाली भैंस। वह पूरे विश्वास के साथ दावा करती है कि विसराम की पतोहू को भगाने में मनतोरिया की माई का हाथ है। अभी खाना-तलासी ली जाय तो पतोहू गहना और 'गुंडा' समेत इसी के घर से बरामद हो सकती है। लोग झूठ-मूठ टेशन बाजार खोजने गऐ हैं।

मनतोरिया की माई अभी-अभी ही विसराम के दरवाजे से गई है बहुत जरूरी-जरूरी काम निपटाने। पहुँचानेवालियाँ तुरंत उसके कानों में सारी बात पहुँचाती है। वह काम-धाम छोड़कर दौड़ती है। लेकिन डीजल की माई को भी झगड़ने का पुराना अनुभव है। आमने-सामने लड़ने का कायदा नहीं। वह खिसक जाती है।

विसराम थोड़ी-थोड़ी देर बाद सिर उठाकर 'शिव-हो, शिव हो', कहता है और फिर झुका लेता है। अब तमाशे में कोई दम नजर नहीं आता। लोग एक-एक करके खिसकने लगे हैं!

सहसा हवा के झोंके पर चढ़कर खबर आती है - पकड़ी गई पतोहिया रेलवे-टेशन पर। जाने कहाँ छिपी बैठी थी। गाड़ी आते ही लपककर चढ़ी। गाड़ी से उतारकर ला रहे हैं लोग। खबर मिलते ही चौंककर खड़ा हो जाता है विसराम, "खबरदार! जो मेरी डेहरी के अंदर कदम रखा हरामजादी ने।"

आगे-आगे मरी चाल से सिर झुकाए, हाथ में बक्सा लटकाए चलती पतोहिया और तीन तरफ से घेरकर चलते खोजी दल के सूरमा। पीछे-पीछे आधा गाँव। याद नहीं पड़ता कि ऐसा तमाशा पिछले कई बरसों में गाँववालों को देखने को मिला हो।

झोंपड़ी के दरवाजे पर हाथ-पैर फैलाकर खड़ा हो गया है विसराम। अंदर का रास्ता हमेशा के लिए बंद। ससुर-पतोहू का नाता खतम!

"जुठारी हुई चीज। दागी जिंस। बाहर बैठाओ।"

इसका भतार नहीं पकड़ में आया। विसराम पूछता है, "दूसरा कौन था साथ में?"

"और तो कोई नहीं था।"

"रहा कैसे नहीं। बगल में या सामने साँवला-सा नौजवान, मूँछवाला?"

"हाँ-हाँ। सामने की सीट पर एक नौजवान बैठा था। मूँछ भी थी। पूछता था, क्यों पकड़ रहे हो औरते को?"

"वही-वही!" विसराम बताता है। वही था डरेवर। पुराना यार इसका। उसको साले को काहे छोड़ दिया। इसके साथ उसका मूँड़ भी मुँड़ाकर गधे की सवारी...

पतोहू बीच दुआर पर बैठ गई है। गाँव की औरतें उसके गिर्द घेरा बनाकर बैठ रही हैं। एक बार फिर से मेला लग गया है। विसराम हाथ जोड़कर गाँववालों के सामने सवाल रखता है। पाँच पंच बताएँ कि उसके लिए क्या हुकुम होता है। बुजुर्ग सलाह करते हैं। फिर तय होता है कि शाम को विसराम के दरवाजे पर पंचायत बैठेगी पूरे गाँव की। उसी में तय होगा कि गाँव की नाक काटनेवाली जनाना को क्या सजा दी जाए।

सहसा विसराम को कुछ याद पड़ता है। वह लपककर पतोहू के बक्से की साँकल झटककर उखाड़ लेता है, "मेरी मेहरारू के गहने? अंदर की चीजें उलट-पलट डालता है। गहने कहाँ गए मेरे? रुपये? मुहर?" वह पतोहू के बाल झिंझोड़ने लगता है।

पतोहू झटके से उठकर खड़ी हाती है? "खबरदार। कुत्ता, दाढ़ीजार, जो दुबारा हाथ लगाया मेरी देह पर। कच्चा चबा जाऊँगी।"

बाप रे! सहमकर पीछे हट जाता है विसराम। औरतों का झुंड पतोहू को खींचकर बैठा लेता है, जरा तेहा देखो। इतने पर भी लाज-शरम का लेश नहीं।

पतोहू पागलों की तरह आँख फाड़कर ताक रही है। बिखरे-खुले बालों को सँभालने की जरूरत नहीं समझती।

विसराम हटकर अपनी जगह पर बैठ जाता है। पतोहू को ढूँढ़कर लानेवाले लोग जीतकर भी हारा हुआ महसूस करने लगे हैं। गहना रुपया तो ले गया डरेवर सार! 'इज्जत' रात में ही ले लिया... उस समय किसी के दिमाग में आई नहीं यह बात। सारे के सारे नए लौंडे। लड़की पाकर ही 'भुच्च' हो गए।

गाँव की औरतें पतोहिया के मुँह से सारा 'असली किस्सा' सुनना चाहती हैं। कब से आता था डरेवर यहाँ? कहाँ छिपाकर रखती थी दिन में? एक औरत ने आँचल के खूँट में बँधा टिकस ढूँढ़ लिया। किसी पढ़वैया लड़के को बुलाओ तो पढ़कर बताए।

पतोहू की तरफ से कोई जवाब न पाकर औरतों को चिढ़ हो रही है। आजकल की लड़कियों को महीना-खांड भी सबर नहीं। पैदा होते ही भतार चाहिए। इसी को कहते हैं कलजुग, बहिनी।

विमली को आनने के लिए आता उसका बाप साँझ का झुटपुट होते-होते गाँव की सिंवार में पहुँचता है। खेतों में काम करनेवाले एक छोड़ दस लोग उसकी बेटी की कलंक गाथा सुनाने के लिए घेर लेते हैं। सुनकर कान बंद कर लेता है विमली का बाप। विमली की माँ सामने होती तो लात-जूतों से हीक भर मारने से शायद कलेजे की जलन कुछ ठंडी होती। विदाई से पहले वह इसी चिंता में रात-दिन डूबता-उतरता था। विदा किया तो लगा छाती से

पहाड़ टल गया। कौन जानता था कि भट्ठे पर सीखा 'गुन' यहाँ आकर दिखा देगी। डरेवर, साला, हरामजादा, एकरी बहिनी क...

अब क्या मुँह लेकर आगे बढ़े वह। कालिख पुता मुँह। ऐसी बेटी का मुँह देखने से भी 'महापाप' चढेगा। अब कौन किसकी बेटी, कौन किसका बाप! पंच लोग पा गए पंचायत में तो सिर पर जूते रखवाएँगे।

अँधेरे का फायदा उठाकर वह उल्टे पैरों लौट पड़ता है।

अँधेरा होते ही गाँव के लोग पंचायत के लिए जुटना शुरू हो जाते हैं। तेरस का चाँद अँधेरे को चीरकर निकलता है, तब तक पंचायत जम जाती है। यह पंचायत जातीय पंचायतों से अलग है। जातीय पंचायत एक जाति की होती है। उसी जाति के पंच उसी के सरपंच। यह पंचायत समाजी है। पूरे गाँव-समाज की। इसमें सभी जाति के पंच हैं। एक-एक।

किसी और का मामला होता तो जातीय सरपंच विसराम चुना जाता लेकिन आज तो वह फरियादी है। बोधन महतो जो विसराम के स्वजाति हैं - सरपंच चुने गए हैं। डीजल का बाप खास पंच। शिवाले के पुजारीजी ने पंच बनना मंजूर नहीं किया। वे गृहस्थ नहीं हैं, बाल-ब्रह्मचारी हैं। लेकिन जरूरत पड़ने पर अपनी बात रख सकते हैं। इसके अलावा बाकी लोगों को भी सवाल उठाने और अपनी बात रखने की आजादी है।

बच्चे मर्दों के बीच में ही टाट पर इधर-उधर घुसे हैं। औरतें तनिक हटकर अलग गोल बनाकर बैठी हैं लेकिन इतना सटकर कि एक-एक सवाल एक-एक जवाब साफ-साफ सुनाई पड़े।

चारों कोनों पर चार मशालची मशाल लेकर खड़े हैं। बीच में एक 'चलता' मशालची। जो भी बोलने के लिए उठता है, 'चलता' मशालची हाथ बढ़ाकर मशाल बोलने वाले के चेहरे की तरफ कर देता है। पंचायत का मुद्दा जग जाहिर है फिर भी रिवाज के मुताबिक विसराम पंचों के बीच में खड़ा होता है। कंधे पर पड़ा अंगौछा माथे लगाकर पंचायत को 'शीश' झुकाता है और अरदास करता है, "पंचो। पंचायत के बीच में जो जनाना बैठी है, मेरी पतोहू है सो आप सभी जानते हैं। मेरा लड़का 'परदेश' गया है। गौना कराने की कोई जल्दी नहीं थी। लेकिन लड़की के बारे में इसके नैहर से जो खबर मिलती थी उसे सुन-सुनकर कान पक गए थे। यह सोचकर कि नैहर छूटेगा तो सब ठीक हो जाएगा, गौना करा लिया। यहाँ आने पर गलत-सही बात देखने पर टोका-टाकी शुरू की तो मेरे टोले के लोगों ने मेरी ही गलती निकालना शुरू कर दिया। सो भी आप लोग थोड़ा-बहुत सुने होंगे। पाँच पंच की बात सुनकर मैंने अलग मँड़ई तैयार किया। लेकिन यहीं गलती हो गई। नजर से दूर होने का नतीजा हुआ कि पतोहू हाथ से बेहाथ हो गई। डरेवर के साथ पहली बार नहीं भागी है यह। मेरी मरी मेहरारू का गहना-गुरिया हाथ से गया, इसकी चिंता नहीं है मुझको। जाँगर रहेगा तो फिर कमा लूँगा। लेकिन इज्जत पर बट्टा लगा दिया, मेरे साथ-साथ गाँव की इज्जत पर। उसका क्या होगा? अब सारा मामला पंच के सामने है। जो चाहे उसको सजा दें। जो चाहे मुझको। हाँ मेरा कसूर है कि मैं कथा-कीर्तन में रमा रहा। इसे 'रखा' नहीं पाया। चौकीदारी नहीं कर पाया। वैसे हम ई जरूर कहेंगे कि कथा-कीर्तन के कारण ही मेरी जान बच गई। नहीं तो अब तक मेरी जली हुई लहास पंचों के बीच में होती।"

विसराम हाथ जोड़कर अपनी जगह पर बैठ जाता है। थोड़ी देर के लिए सन्नाटा हो जाता है। सबकी नजर फिर एक बार औरतों की गोल में बैठी पतोहू की तरफ उठती है। लेकिन चाँदनी में ज्यादा साफ नहीं दीखता।

सरपंच बोधन महतो हैं, "पतोहू को पंच के बीच में खड़ा किया जाय।"

दो-तीन औरतें बाँह पकड़कर पतोहू को बीच में लाती हैं। मशालची मशाल आगे कर देता है। पतोहू सिर उठाकर खड़ी होती है, कोई लाज नहीं! कोई डर नहीं! सिर पर आँचल नहीं। पूरी पंचायत को ठोकर मारती नजरें। यह बात सबको खलती है।

"देखो लड़की। तुम पंच के बीच में खड़ी हो। पंच के बीच माने भगवान के बीच। यहाँ न कोई किसी का हितू है न मुद्दई। यहाँ जो भी बोलना होगा, सच-सच बोलना होगा। भगवान को हाजिर-नाजिर जानकर बोलना होगा। मंजूर?"

स्वीकृति में सिर हिलाती है पतोहू।

"तुम घर से किसके साथ भागी। काहे भागी?"

"किसी के साथ नहीं। अकेले भागी। अपने आदमी के पास जा रही थी - कलकत्ता।"

"तब गहना-रुपया किसको दे दिया सास का?"

"मैंने कोई गहना-रुपया नहीं खोदा। यह सब झूठ है।"

"झूठ है? रात तेरे साथ कोई आदमी था झोंपड़ी में। दारू पीई गई। मछली खाई गई। क्या यह भी झूठ है?"

"यह सच है।"

"तू मिट्टी के तेल की बोतल ओर माचिस लेकर विसराम की मँड़ई में गई थी, यह सच है कि झूठ है?"

"सच है?"

"क्यों गई थी?"

"गई थी इसे मिट्टी का तेल डालकर फूँकने।"

"काहे।"

"क्योंकि रात मेरी झोंपड़ी में दारू पीनेवाला, मछली खानेवाला और मेरे साथ मुँह काला करनेवाला जानवर यही था। मैं इसे जिंदा जलाना चाहती थी लेकिन यह बच गया। अब मैं इसका कच्चा मांस खाऊँगी।"

पतोहू विसराम की तरफ लपकती है। थोड़ा हो-हल्ला होता है। लोग उसे पकड़कर बैठा देते हैं। पंचायत में भनभनाहट होने लगती है।

विसराम को अब डरने की जरूरत नहीं। वह हाथ जोड़कर खड़ा होता है। "पंचों से मेरी एक अरदास है। यहाँ पर शिवाले के पुजारी बैठे हैं। पंच उनसे पूछ सकते हैं। रात दस-ग्यारह बजे तक तो मैं 'कथा' में व्यस्त रहा शिवाले पर। फिर घर आया। खाना खाकर जरा कमर सीधी किया। ठीक से झपकी भी नहीं आई और फिर सीधा शिवाले की सीढ़ियों पर जाकर पड़ गया। आधी रात को बाबाजी उठे तो मुझे सीढ़ियों पर पड़ा पाया। मैंने इसके साथ मुँह काला कब कर लिया? मछरी कहाँ बैठकर पकाया? दरवाजा तो यह अंदर से बंद करके सोती है? उसे कब कैसे खोल लिया? और यह सब हुआ तो इसने हल्ला-गुल्ला क्यों नहीं किया?"

पुजारीजी ने सिर हिलाकर समर्थन किया, "दो-तीन घंटे मुश्किल से शिवाले से हटा होगा विसराम। बल्कि सपने की चर्चा भी उसने की थी। सबेरे आरती कराई, भजन सुनाया। पंचों के लिए सचमुच सोचने की बात है।"

तू झोंपड़ी अंदर से बंद करके सोती है। विसराम बाहर मँड़ई में सोता है। फिर वह अंदर कैसे घुसा?"

"वह परसाद लेकर शाम को आया। मैंने परसाद 'ग्रहन' किया। फिर मुझे आलस आ गया। नींद आने लगी। मैं बिना दरवाजा बंद किए लेट गई।"

"ताज्जुब की बात! लेकिन जब तेरे साथ गलत काम होने लगा तब भी तेरी नींद नहीं टूटी।"

"जरा-सी टूटी थी लेकिन आँख खुलती ही नहीं थी। जैसे नशा चढ़ा हुआ था।"

"हुँह! नशा चढ़ा था। तो इतनी जल्दी उतर गया नशा! बताइए भला। यह विश्वास की बात है। औरत के साथ ऐसा-वैसा काम हो और उसकी नींद न टूटे। ऐसा कलजुगी बयान!"

"और मछली कहाँ पा गया विसराम? वह तो दिन भर शिवाले पर था।"

इसका क्या जवाब दे पतोहू?

बाल विधवा बिरजा बैठी सोच रही थी अगर वह कह दे कि मछली का चिखना तो उसी से बनवाया था विसराम ने। शिवाले से लौटते समय लेते हुए आया था - तो? अभी सारी पंचायत उलट जाएगी... लेकिन तब उससे भी पूछा जा सकता है - कितने साल से वह विसराम का चिखना बनाती रही है? आगे से चिखना बनाना बंद हो जाएगा सो अलग।

मनतोरिया की माई से नहीं रहा जाता। वह उठकर खड़ी हो जाती है - "एकदम ठीक बोलती है पतोहू! मैं गवाह हूँ। एक दिन में खुद गई थी इसकी झोंपड़ी में। वही दारू की बोतल। वही बीड़ी के टोंटे। पुराना पापी है विसरमवा। महागीध। घटियारी शुरू से इसके मन में बसी है।"

"किसकी औरत है यह? जनाना की जात, बिना बुलाए कैसे कूद पड़ी बीच में। 'छुट्टा' छोड़ी गई है क्या? कौन है इसका आदमी?"

कुछ लोग मनतोरिया की माई को डाँटकर बैठा देते हैं। फिर विचार-विमर्श होने लगता है। अगर शुरू से घटियारी की बात मान ले तो आज तक पतोहू ने मुँह क्यों नहीं खोला कभी?

विसराम फिर भयभीत होता है। वह हाथ जोड़कर खड़ा होता है।

"पंचो! मेरी पतोहू को बिगाड़ने में इसी औरत का हाथ है। मनतोरिया की माई का। पतोहू से सवाल किया जाय कि क्या डरेवर वाला किस्सा झूठा है? कुइसा मिस्त्री का गहना-गुरिया गढ़ाना झूठा है? ट्रैक्टर चलानेवाले लड़के के साथ मेला देखना झूठा है?"

फिर सवाल? सवाल पर सवाल।

पतोहू एक-एक सवाल का जवाब देती है। डरेवर भट्ठे पर आता है। वह उसे खाना बनाकर खिलाती थी। इसके आगे और कोई बात नहीं। बिल्लर ट्रैक्टर चलाता था। मेला देखने वह अकेले नहीं भट्टे की सारी औरतों के साथ गई थी। कुइसा मिस्त्री की जनाना नहीं है। उसे जनाना की तलाश है। लेकिन उसके बाप के साथ कोई सौदा हुआ था इसकी जानकारी उसे नहीं है। गहना-गुरिया उसने अपनी कमाई से बनवाया है।

कुछ भी हो, लेकिन बदनाम रही है पतोहू मायके में, यह बात साबित होती। फिर उसका बयान भी यकीन के काबिल नहीं कि नींद के मारे वह बिना किवाड़ बंद किए सो गई और 'ऐसी-वैसी' बात होने पर भी उसकी आँख नहीं खुली। और रात में ऐसी नींद में मतवारी हो रही थी तो सबेरे बताती। भागी काहे? विसराम को मछरी कहाँ से मिल गई? गहने खोदे गए और पतोहू के पास नहीं मिले तो जरूर कोई साथ था जो लेकर भाग गया। गाड़ी में एक नौजवान टोका-टाकी भी किया था गाँववालों के साथ।

रात आधी से ज्यादा बीत गई है। चंद्रमा सिर के ऊपर आ गया है। छोटे बच्चे महतारी के कोरे में सो रहे हैं। बड़े बच्चे टाट पर इधर-उधर पड़े हैं। सब इस लालच में जुटे थे कि पंचायत खत्म होने पर सबको गुड़ खाने को मिलेगा।

काफी देर बाद पंच इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि पतोहू का ससुर पर लगाया गया आरोप बेबुनियाद है। पतोहू ने रात अपने यार को बुलाय था। उसके साथ दारू पिया। मछली खाई। मुँह काला करवाया। गहना खोदकर निकलवाया और सबेरे भागते-भागते ससुर को फूँक जाना चाहती थी कि पीछे कोई ढूँढ़ने वाला न बचे। अब इसकी क्या सजा दी जाय, यह सोचना है।

पुजारी बताते हैं - वेदों में कई तरह की सजाएँ लिखी हैं। लाल मिर्च की बुकनी भरने की सजा। लछिमनजी ने तो इससे छोटी गलती पर नाक-कान दोनों काट लिये थे। अभी-अभी एक वेद वे हरिद्वार से लाए हैं। उसमें लिखा है- बालब्रह्मचारी की सेवा से भी 'परासचित' होता है।

सजा की तजवीज में हल्ला-गुल्ला तेज हो जाता है।

थोड़ी देर बाद पुजारीजी फिर कहते हैं कि अगर पहली गलती का ध्यान रखते हुए पंच सुधार का मौका देना चाहें तो छः महीने के लिए शिवाले पर झाड़ू लगाने की सजा देना काफी रहेगा।

लेकिन इधर किसी का ध्यान नहीं है। पुजारीजी को लगता है कि लोग जान-बूझकर उनकी सुझाई सजा की तरफ ध्यान नहीं देना चाहते।

काफी देर तक 'विचार' होता है। अंत में बोधन महतो खड़े होकर फैसला सुनाते हैं, "गाँव के नाक कटानेवाली, गाँव की इज्जत में दाग लगानेवाली जनाना को बेदाग नहीं छोड़ा जा सकता। अगर आगे थाना-पुलिस तक बात जाती है तो भी गाँव के लोग उसे चंदर करके झेलेंगे लेकिन दागी जनाना को 'दाग' करके ही नैहर भेजा जाएगा।"

चारों तरफ सन्नाटा! कुत्ते तक चुप हैं।

"अब सवाल है कि दागा कहाँ जाय? तो, इसने अपने 'बियहा', अपने 'सोहाग' के साथ दगा किया है। जिस धन की इच्छा जान देकर भी करना औरत का धरम माना गया है उसे चिखना और दारू के नशे में फिरी में लुटा दिया है इस बदकार ने - बाहरी आदमी को। इसकी कोई माफी नहीं। इसके लिए तो ऐसी जगह दागना चाहिए कि न कहीं दिखाने लायक रहे न बताने लायक। लेकिन जुग-जमाना बहुत बदल गया है। सड़ा हुआ मामला भी थाना-पुलिस में जाता है तो हजार से कम में बात नहीं होती। तो बदले जमाने में सोहाग से दगा की सजा है, सोहाग की निशानी, बिंदी-टिकुली लगानें की जगह, बीचोबीच माथे पर दगनी। जिंदगी भर के लिए कलंक-टीका।"

एक पल के लिए रुकते हैं बोधन महतो, "किसी को कोई एतराज हो तो बोलो। सबको मंजूर?"

"तो आज अभी पंचायत के बीच लोहे की कलछुल की डाँडी लाल करके दागने का काम विसराम के जिम्मे। पतोहू की निगरानी करने में चूक हुई, इसकी सजा।"

मनतोरिया की माई से फिर नहीं रहा जाता। वह फिर लपककर बीच में आती है - "ई अँधेर है। दगनी दागना है तो विसराम और बोधन चौधरी के चूतर पर दागना चाहिए। कोई काहे नहीं पूछता कि बोधन की बेवा भोजाई दस साल पहले काहे कुएँ में कूदकर मर गई थी। गाँव की औरतें मुँह खोलने को तैयार हो जाएँ तो विसराम की घटियारी के वह एक छोड़ दस 'परमान, दे सकती है। वही आदमी बेबस बेकसूर लड़की को दागेगा? और वही बोधन बड़का पग्गड़ बाधकर दगनी की सजा सुनाएँगे? यही नियाय है? ई पंचायत नियाय करने बैठी है कि अँधेर करने?"

मनतोरिया के बाप को इस बार सचमुच गुस्सा आ जाता है। इतने बड़े गाँव में वही सबसे कमजोर मर्द है जो उसी की जनाना भरी पंचायत में गचर-गचर बोले जा रही है? वह लपककर औरत का बाल पकड़ता है और घर-घर घसीटते हुए पंचायत से बाहर ले जाता है।

अपने आदमी को क्या कहे वह? आदमी तो आदमी। हाथी हाथी होता है। महावत महावत। चाहे कितना ही कमजोर महावत क्यों न हो।

तब तक पतोहू उठकर खड़ी होती है, "मुझे पंच का फैसला मंजूर नहीं। पंच अंधा है। पंच बहरा है। पंच में भगवान का 'सत' नहीं हैं मैं ऐसे फैसले पर थूकती हूँ - आ-क्-थू...! देखूँ कौन माई का लाल दगनी दागता है।"

वह पंचायत से निकलकर जाने लगती है। पल भर सन्नाटा रहता है। डीजल का बाप ललकारता है, "सब लोग चूड़ी पहन लिये हैं?"

फिर 'पकड़ो-पकड़ो' की आवाजे। कई नौजवान पीछे-पीछे दौड़ते हैं। थोड़ी देर में हाथ-पैर चलाती पतोहू को सब बकरी की तरह गोद में उठाए हुए लाते हैं और बीच में बैठा देते हैं। कितनी मुलायम देह है - गुदगुदा मांस! दाब के बैठो। फिर न भागे। डरेवर साला बचकर निकल गया।

पूरी पंचायत की तौहीन। पहले गाँव की नाक कटवाई फिर पंचायत पर थूक दिया। हिजड़ों का गाँव समझ रखा है क्या?

डीजल का बाप एक नौजवान को लोहे की कलछुल और उपले लाने का हुकुम देता है। दाँव लगा तो मनतोरिया की माई की दगनी भी करके छोड़ेगा वह किसी दिन। दागने की सजा सुनकर औरतें एक-एक करके खिसकने लगती हैं।

दागने का काम नया नहीं विसराम के लिए। जानवरों के 'जीभी' 'सहनी' रोगों में आए दिन जीभ और मसूड़े दागता रहता है। लेकिन औरत की दगीनी। पहली बार मौका मिला है।

कलछुल लाल होते ही कई नौजवान पतोहू को हाथ-पैर और सिर पकड़कर लिटा देते हैं? कसकर दबाओ। जो जहाँ पकड़े वहीं मांसलता का आनन्द ले लेना चाहता है। नोचते-कचोटते, खींचते, दबाते, हाथ। पतोहू जिबह होती गाय की तहर 'अल्लाने' लगती है। सोनेवाले बच्चे जगकर रोने लगते हैं। जगे हुए बच्चे डरकर घर की तरफ भाग चले हैं ।

लाल डाँड़ीवाली कलछुल लेकर आगे बढ़ता है विसराम। इतने दिनों बाद फिर दुहराई जा रही है महाभारत की कथा-भरी सभा में लाचार औरत की बेइज्जती!

इसके कारण भी कोई महाभारत होगा क्या?

काहे भाई। ई कोई रानी-महारानी है?

मशालची मशाल नीचे झुकाता है। दागने का मन एकदम नहीं है। विसराम का, लेकिन 'करम' का भोग तो भोगना ही पड़ेगा।

छन्न! कलछुल खाल से छूते ही पतोहू का चीत्कार कलेजा फाड़ देता है। कूदती लोथ! मांस जलने की चिरायंध! चीत्कार सुनकर एकाध कुत्ते भौंकते हैं, एकाध रोने लगते हैं।

चीखते चीखते बेहोश हो गई पतोहू! लोग पीछे हटते हैं।

पंचायत टूट रही है। हवा में भोर की ठंड आ गई है। पुजारीजी भारी मन से कहते हैं - तिरिया चरित्तर समझना आसान नहीं। बाबा भरथरी ने झूठ थोड़े कहा है - तिरिया चरित्रम् पुरूषस्य भाग्यम्...

बीसों सिर एक साथ सहमति में हिलते हैं।